RNI No. 7127/60

डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City / 411 2017-19

संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 56 | अंक : 09 | कुल पृष्ठ : 36 | 4 सितम्बर, 2019

शुल्क एक प्रति : 15/- | वार्षिक : 150/- रुपये | पंचवर्षीय 700/- रुपये | दस वर्षीय 1300/- रुपये

रानी दुर्गावती रण में निकली, हाथों में थी तलवारें दो।
धरती कांपी आकाश हिला, जब चलने लगी तलवारें दो।।

HITKARI & SWARAJ

हितकारी मेडिकोज

राजकीय चिकित्सालय के सामने, बाड़मेर-344001 राजस्थान

फोन : 02982226666

प्रो. पृथ्वी सिंह राठौड़

आजाद सिंह राठौड़

सिद्धार्थ सिंह राठौड़

-: सम्बंधित फर्म :-

हितकारी & स्वराज इंटरप्राइजेज प्राइवेट लिमिटेड

हितकारी प्रोजेक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड

संघशक्ति

4 सितम्बर, 2019

वर्ष : 56 अंक-09

-: सम्पादक :-

लक्ष्मणसिंह बेण्यांकाबास

शुल्क - एक प्रति : 15/ रुपये, वार्षिक : 150 रुपये, पंचवर्षीय : 700/- रुपये , दस वर्षीय : 1300 /- रुपये

विषय - सूची

❍ समाचार संक्षेप	✍	04
❍ चलता रहे मेरा संघ	✍ श्री भगवानसिंह रोलसाहबसर	05
❍ पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)	✍ श्री चैनसिंह बैठवास	08
❍ मेरी साधना	✍ प्रो. रूपसिंह लिम्बड़ी	10
❍ गढ़ा-मण्डला की वीरांगना रानी दुर्गावती	✍ स्वामी गोपाल आनन्द बाबा	14
❍ आध्यात्मिक अनुभूतियों की सत्यता	✍ स्वामी यतीश्वरानन्द	16
❍ हल्दीघाटी का विस्मृत, बलिदानी रामशाह तोमर	✍ श्री गोपालसिंह राठौड़	19
❍ चरित्र-निर्माण में संस्कारों की समष्टि	✍ स्वामी श्री विवेकानन्द जी	21
❍ विचार-सरिता (सप्तचत्वारिंशत् लहरी)	✍ श्री विचारक	23
❍ सत्य नकारा नहीं जा सकता	✍ श्री मातुसिंह मानपुरा	26
❍ अति सर्वत्र वर्जनीय	✍ श्री भँवरसिंह रेड़ी	27
❍ अपनी बात	✍	30

समाचार संक्षेप

पू. नारायणसिंह जी की जयन्ती :

श्री क्षत्रिय युवक संघ के तृतीय संघप्रमुख पू. नारायणसिंहजी रेड़ा की जयन्ती 30 जुलाई को संघ के विभिन्न प्रान्तों में उत्साहपूर्वक मनाई गई। पू. तनसिंहजी ने उनको प्रथम मिलन पर ही पहचान लिया था और संघ के आदर्श स्वयंसेवक की कल्पना के अनुकूल उभरकर पू. नारायणसिंहजी ने पू. तनसिंहजी की पहचान को पुष्ट किया। सन् 1969 से 1989 तक 20 वर्ष तक वे संघप्रमुख रहे। संघप्रमुख दायित्व के प्रथम दस वर्षों में अपनी समर्पित सक्रियता से उन्होंने स्वयंसेवकों में संघ के प्रति लगाव को प्रगाढ किया और अन्तिम दस वर्षों में तो वे जीवन्त प्रेरणा बन गए। इस अवधि में उनकी आध्यात्मिक शक्ति के निखार से जो प्रकाश फैला उससे पूरा संघ पारिवारिक भाव से आबद्ध हो गया। उस समय शायद वे तो परिवार, संघ, समाज, संसार से अलिप्त स्थिति तक पहुँच गए हों, लेकिन उनका जीवन प्रत्येक स्वयंसेवक को प्रेरित कर रहा था। पू. तनसिंहजी का कहना था कि अंत:करण की पवित्रता और समर्पण से परमसिद्धि प्राप्त हो सकती है और उनके कथन का साकार रूप नारायणसिंहजी के रूप में हमारे सामने था। संघ मार्ग पर अपने नेतृत्व की आज्ञा का पालन समर्पित होकर करते रहें तो उस परमसिद्धि की ओर गति मिलती है, पू. नारायणसिंहजी के जीवन से वह प्रेरणा मिल रही थी।

जयपुर में संघशक्ति प्रांगण में संघप्रमुख माननीय भगवानसिंहजी के सान्निध्य में जयन्ती कार्यक्रम सम्पन्न हुआ, जिसमें नारायणसिंहजी के जीवन की विशिष्टताओं की जानकारी संघप्रमुखश्री के माध्यम से उपस्थित सभी ने प्राप्त की। कार्यक्रम में पारिवारिक सहभोज का भी कार्यक्रम प्रतिवर्ष की तरह रखा गया।

जैसलमेर शहर स्थित कार्यालय तनाश्रम में, विवेकानन्द स्कूल शाखा में, बेरसियाला में, रजवाड़ा फोर्ट व डूंगराय छात्रावास में, राजपूत छात्रावास में, रामगढ प्रांत के भोजराजसिंह की ढाणी व पोकरण में राजपूत छात्रावास में जयन्ती का आयोजन हुआ।

सांचोर, रानीवाड़ा, जसवंतपुरा, भीनमाल व रेवदर मंडल की शाखाओं का जयन्ती कार्यक्रम वडेसी माता मंदिर में सम्पन्न हुआ जिसमें सभी सपरिवार सम्मिलित हुए। कार्यक्रम के बाद स्नेज भोज भी रखा गया।

अहमदाबाद के मेघाणी नगर में; सूरत के जानकी वन फार्म हाऊस में; मोरचन्द मंडल की शाखाओं में; वल्लभीपुर राजपूत छात्रावास, धंधुका राजपूत छात्रावास, धोलेरा तथा भड़ियाद में; बनासकांठा प्रांत की करबुण शाखा, पृथ्वीराज शाखा वलादर, महाराणा प्रताप छात्रावास दियोदर व तणेराव शाखा नारोली में जयन्ती कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

बाड़मेर के गांधीनगर स्थित राजपूत सभा भवन, न्यू विरात्रा मॉडर्न होस्टल चोहटन, कनीराम जी का रामद्वारा, नागणेची माता मंदिर मूलाना, आयुवान निकेतन कुचामन, बांसवाड़ा के नौगामा, मंगल बाल उ.मा. विद्यालय बेलवा की बालक व बालिका शाखा, राजगढ में रानी पदमावती बालिका शाखा व महाराणा प्रताप बालक शाखा, भिंयाड़ शाखा (बाड़मेर), भूपाल नोबल्स उदयपुर, दुर्गा महिला विकास संस्थान सीकर, बीकानेर के विजय भवन, नारायण निकेतन, पंचवटी छात्रावास, मोतीगढ, झंझेऊ, किरतासर आदि शाखाओं में तथा सामुहिक रूप से जयन्ती मनाई।

मुम्बई की तनेराज शाखा गिरगांव चौपाटी, नारायण शाखा भायंदर, वीर दुर्गादास शाखा मलाड, आयुवान शाखा एरोली तथा कल्लारायमलोत शाखा कल्याण के स्वयंसेवकों ने जयन्ती कार्यक्रम मनाया। दिल्ली की शास्त्री नगर शाखा में जयन्ती मनाई।

सभी कार्यक्रमों में पू. नारायणसिंहजी के जीवन पर प्रकाश डाला गया।

संघप्रमुख श्री का प्रवास :

माननीय संघप्रमुखश्री 1 अगस्त से प्रवास पर रहे। शिविर कार्यालय प्रमुख श्री दीपसिंह बेण्याकाबास भी पूरे प्रवास में साथ रहे। 1 अगस्त को कुचामन सिटी स्थित आयुवान निकेतन में स्थानीय स्वयंसेवकों से मिलना हुआ और गतिविधियों की जानकारी प्राप्त की। 2 अगस्त को

(शेष पृष्ठ 13 पर)

चलता रहे मेरा संघ

(उच्च प्रशिक्षण शिविर गनोड़ा (बाँसवाड़ा) में 18 मई, 2019 को संघप्रमुख श्री भगवानसिंहजी द्वारा शिविरार्थियों हेतु उद्‌बोधित स्वागत संदेश)

मेरे प्रिय आत्मजन ग्यारह दिन के लिये हम एक अनुष्ठान कर रहे हैं और यह अनुष्ठान एक दिव्य उद्देश्य के लिये है। कोई सांसारिक वस्तु प्राप्त करने के लिये नहीं है। क्षत्रिय युवक संघ का मार्ग संपूर्ण योग मार्ग है। योग का अर्थ है मिलना। जो बिछुड़ जाते हैं उनका मिलना। आत्मा और परमात्मा, जीव और ब्रह्म जब बिछुड़ते हैं तो संसार बनता है। और फिर उन दोनों का मिलने का प्रयास ही योग कहलाता है। तो क्षत्रिय युवक संघ का मार्ग ईश्वर तक योग से ले जाने वाला है। यह इस प्रकार की साधना है जो बाहर की कम है और भीतर की अधिक है। फिर भी हम शरीर से भी साधना करेंगे, मन की साधना भी करेंगे, बुद्धि की साधना भी करेंगे और आत्मा की साधना भी करेंगे, और इसलिए इसको संपूर्ण योग मार्ग कहा है। जब हम प्रारम्भ करते हैं साधना को, योग की प्रक्रिया को अपने जीवन में उतारने के लिये, तो लक्ष्य हुआ ईश्वर को प्राप्त करना। हमारी साधना को कहा गया है-संपूर्ण योग मार्ग। किन्तु हमारी कार्यप्रणाली को सामूहिक संस्कारमयी कर्म-प्रणाली कहा है। ईश्वर को प्राप्त करने के लिये सबका समूह में इकट्ठा होना आवश्यक नहीं है, सबको संस्कारित बनाने की आवश्यकता नहीं है, अकेला व्यक्ति भी कर सकता है, लेकिन हम एक सामाजिक साधना कर रहे हैं।

क्षत्रिय युवक संघ की मान्यता है कि व्यक्ति तीन आयामों में जीता है, साधना करता है। एक है उसकी व्यष्टिगत साधना, एक है समष्टिगत साधना, एक है परमेष्टिगत साधना और तीनों में ही लक्ष्य है ईश्वर को प्राप्त करना। संसार में रहकर संसार से भागना नहीं। भगवान ने हमको संसार में भेजा है तो संसार से भागना हमारे लिये अपराध हो जाएगा। संसार को साथ लेकर, सावधान रहकर, अपनी चित्त वृत्तियों को नियंत्रित करके हम अपने परिवार के साथ रहें, अपने गाँव के साथ रहें, अपने समाज और राष्ट्र के साथ में रहें। तभी यह सामाजिक और समष्टिगत साधना ही हमारी परमेष्टिगत साधना बन जाएगी। लक्ष्य ही जब ईश्वर को प्राप्त करना है तो साधना चाहे किसी भी प्रकार की हो, वह ईश्वरोन्मुखी है। अब हम बहुत बड़ा उद्देश्य लेकर दिव्य साधना करने के लिये जा रहे हैं। आप लोगों में से अधिकांशत: लोगों से मेरी जानकारी है। अनेकों बार शिविरों में आए हैं। आज मैं जो यह बात कह रहा हूँ यह कोई नई और आधुनिक नहीं है। सृष्टि के आदिकाल से जब से व्यक्ति ने बोलना सीखा है, वही बात जो ऋषियों ने कही, जो मुनियों ने कही, जो अनुभूति प्राप्त व्यक्तियों ने कही, जो आप्त पुरुषों ने कही, जो हमारे शास्त्रों ने कही, वो ही बात कह रहा हूँ।

हम बहुत सरल तरीके से इस साधना को करना चाहते हैं, ताकि सब लोग सामूहिक रूप से इस काम को कर सकें, इस साधना को कर सकें और इसलिए छोटे-छोटे सूत्र आपको बताता हूँ जिनका आपको इस शिविर में विशेष रूप से ध्यान रखना है। पाँच सूत्र ऐसे हैं-यह नहीं करना चाहिए यह बताते हैं और पाँच सूत्र ऐसे हैं जो क्या करना चाहिए यह बताएँगे। जिसको योग की भाषा में यम और नियम कहते हैं। तो पहला सूत्र है जो नहीं करना है-झूठ नहीं बोलना है, आप नोट कर लीजिए-इस शिविर में, न आपके घट में, न खेल खेलते समय, न चर्चा करते समय। अभी आप केन्द्र में रखिए केवल शिविर और यही शिविर आपके जीवन का अंग बन जाएगा। तो आप झूठ नहीं बोलेंगे, असत्य भाषण नहीं करेंगे, असत्य आचरण नहीं करेंगे। सदाचारी आचरण करेंगे। यह पहला सूत्र है, नहीं करने का। और दूसर सूत्र है-हम किसी को तकलीफ नहीं देंगे, हम किसी को कष्ट नहीं देंगे। हमारे कारण मेरे घट में रहने वाले नौ-दस व्यक्ति किसी प्रकार का कष्ट न भुगतें। केवल घट का ही नहीं, खेल खेल रहे हैं तो भी भोजन कर रहे हैं तो भी, आप साथ में पानी पी रहे हैं तो भी, गीत गा रहे हैं तो भी, हम हँस रहे हैं तो भी, इतना प्रसन्न नहीं होना, इतना खड़-खड़ाकर के नहीं हँसना जिससे दूसरों को बाधा पहुँचती हो। और इतना कंजूस भी नहीं होना कि हम कोई अच्छी बात पर मुस्कराएँ भी नहीं। किसी को कष्ट नहीं देना। यह हमारे जीवन में, इस शिविर में दूसरी ध्यान रखने योग्य बात है।

तीसरी वस्तु आपको ध्यान में रखनी है कि जो इस संसार में है, वह सब ईश्वर का है।

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।
तेन त्येक्तेन भुंजिथाः मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।।

सब कुछ ईश्वर द्वारा आच्छादित है। ***तेन त्येक्तेन भुंजिथाः*** जो हमको दिखाई दे रहा है, जो हमको उपलब्ध है, वह उपयोग करने के लिये है, उसका त्याग करके उपयोग करें। उनमें आसक्ति न रखें। न भोजन में, न अपने घट स्थान में, कहीं भी नहीं। आपको हो सकता है कि रोजाना दूसरे घट में भेज दिया जाए। दूसरे पथक में भेज दिया जाए। सोने का स्थान आपका बदल दिया जाए। तो जो ईश्वर का है, वह किसी और का नहीं है। आपका भी नहीं है। जो आपका नहीं है उस पर किसी भी प्रकार का हम अधिकार जमाएँ तो यह साधना खण्डित हो जाती है। किसी वस्तु की चोरी नहीं करना। चोथा है ब्रह्मचर्य। संयम। अपनी इन्द्रियों पर संयम रखें। आपका खाने को भी मन ललचाएगा। आपकी इधर-उधर देखने के लिये आँखें भी तड़फड़ाएगी। आपके कान भी इधर-उधर सुनने के लिये कुछ करेंगे। आपको जो लक्ष्य दिया गया है बस वो ही बात सुननी है, वो ही देखनी है, वो ही चीज खानी है, वो ही स्पर्श करनी है। यह इन्द्रियों पर संयम है। और पाँचवी वस्तु जो नहीं करनी है, वो है संग्रह नहीं करना। आप जो कुछ आपके साथ लाए हैं, वो आपके थेलों में पड़ा है किसी और की वस्तुओं को तो नहीं ही लेना है। जितनी आवश्यकता हो आपको, चार रोटी खानी है तो चार ही लें पाँचवीं न लें। आपका स्थान सोते समय कम से कम चल सकता है तो उतना ही रोकें। किसी भी चीज का संग्रह नहीं करना। इन्हें पाँच यम कहते हैं। सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। योग के बड़े सूत्र हैं और बहुत छोटी-छोटी बातें हैं, जो हम आसानी से कर सकते हैं इस शिविर में, इन ग्यारह दिनों में।

अब क्या करना है ऐसे पाँच सूत्र हैं। जिनको नियम कहते हैं। नियम हमारी सुविधा के लिये हम बनाते हैं। उन नियमों को कभी नहीं तोड़ें। वो नियम क्या हैं जो कभी नहीं तोड़ने हैं। पहला है शुद्धि। अपने स्थान को शुद्ध रखें, अपने कपड़ों को शुद्ध रखें, भोजन करें तो शुद्धि के साथ करें और किसी भी प्रकार की गन्दगी हम फैलने न दें। यह करना है अपने को। करने का पहला सूत्र है शौच, पवित्रता, शुद्धि। स्नान करना बाहर-भीतर की शुद्धि, मन की शुद्धि, बुद्धि की शुद्धि, चित्त की शुद्धि, सब तरह से जो आवरण गन्दगी के आ गए हैं उनको हमको दूर करना है। दूसरा सूत्र है संतोष। जो मिल रहा है उसी में संतोष। जैसा भोजन मिल रहा है, जैसा रहने का स्थान है, जैसी परिस्थिति में रह रहे हैं, उसी में संतुष्ट होकर प्रसन्नचित्त रहें। तब हम योग का यह दूसरा सूत्र पूरा कर पाएँगे। फिर है तप। तप का मतलब कोई धूप में खड़े रहना या अग्नि जलाकर तपते ही रहना या एक टाँग पर खड़े रहना, यह तप हो सकता है, हम मना नहीं करते, लेकिन हम किस तप की बात कर रहे हैं? अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिये हम कष्टों की परवाह न करें। कष्ट आएँगे। इन ग्यारह दिनों में आपको किसी चीज का अभाव भी होगा। कोई बोलेगा वो आपको कहीं कंकरी-सी भी लगेगी। लेकिन इन सबको सहन करना, उद्देश्य प्राप्ति के लिये आने वाली सारी बाधाओं को सहन करना, यह तप हमको करना है।

चौथा है स्वाध्याय। अध्याय हम कहते हैं चेप्टर (पाठ) को, स्व कहते हैं अपने को, स्वयं को, खुद को। तो हमारा स्वयं का चेप्टर (पाठ) क्या है? अपने आपका अध्ययन करना, आंकलन करना, अपनी समीक्षा करना, अपना अन्तरावलोकन करना, देखते रहना कि कहीं मेरे से भूल तो नहीं हुई। तो अपनी भूलों को न होने दें और जो अच्छाई आप में आ गई है उसको छोड़ न दें। यही स्वाध्याय इस शिविर में हमारे रहेगा। अपने आपको जो नहीं देखेगा और जो दूसरों को देखेगा वो अपना निर्माण नहीं कर सकेगा। आपके ऊपर दायित्व है तो अवश्य दूसरों को कुछ कहें। अन्यथा आपको कोई गलत भी कह रहा है, तो भी आपको कुछ नहीं कहना है। आपके इस शिविर में दस-दस साथियों का एक घट बनाया है और घटनायक इन चीजों का ध्यान रखेंगे। आपके पास में किसी भी प्रकार की कोई शिकायत हो, कोई आवश्यकता हो तो अपने घटनायक को कहें। फिर है ईश्वर प्रणिधान। जो कुछ हम कर रहे हैं वह हम नहीं कर रहे हैं, परमात्मा ने ही हमको भेजा है, परमात्मा ने ही वह बुद्धि दी है। परमात्मा ने ही

सारी शक्ति दी है उसी की ही क्षमताएँ हैं, सब वही कराने वाला है। हमको लगेगा कि हम कर रहे हैं। यह अहम् बुद्धि ही हमारा सर्वनाश कर देती है। मैंने करने वाला हूँ, मैं अच्छा करने वाला हूँ, मैं नम्बर लाने वाला हूँ, मैं कॉम्पीटिशन में पास होने वाला हूँ, मैंने इतना संग्रह किया है, मैंने इतने पुत्र पैदा किए हैं आदि आदि। यह अहम् बुद्धि है यह हमारा सत्यानाश कर देती है। ईश्वर प्रणिधान का अर्थ है सब कुछ ईश्वर को समर्पित कर देना। हम ईश्वर की साधना कर रहे हैं तो ईश्वर की सहायता के बिना वह साधना नहीं कर पाएंगे। तो ये बहुत छोटे-छोटे सूत्र हैं। आगे अन्य बहुत सारी बातें बताई जाएगी।

इन ग्यारह दिनों में आपके घटनायक भी और भी आपको बताएँगे। आपके पथक शिक्षक भी बताएँगे, आपके अन्य शिक्षक हैं वो भी बताएँगे, शिविर प्रमुख है वो भी बताएँगे। मैं आपको छोटे-छोटे सूत्र देता हूँ। जो आपकी इस साधना को, इस योग की प्रक्रिया को प्रारम्भ करने में ''ए'' फोर एपल है, क, ख, ग ही हैं, जो मैं बता रहा हूँ यह पी.एच.डी. की शिक्षा नहीं है। यह सब करेंगे तो आपको लगेगा कि जो महात्माओं ने, ऋषियों ने जो साधना की है योग की, उस योग में और हमारे इस योग में कोई अन्तर नहीं है। यह जो मैंने सूत्र बताएँ हैं उन सूत्रों पर आप चलें तो निश्चित रूप से वह भी प्राप्त हो सकता है जो क्षत्रिय युवक संघ का उद्देश्य है। ईश्वर प्राप्ति हमारा उद्देश्य है। क्षात्र धर्म इस जीवन में पूरा करने के लिये हमें दिया गया कर्त्तव्य है, उसको हम करेंगे, जो परमेश्वर कराएगा। और यही आज हमने 'भूलाये न भूले' गीत में गाया है। वह सब, हमने किया है। पूरे संसार पर शासन किया है। शोषण नहीं किया, शोषित लोगों के लिये उपाय किए। दुखी लोगों के लिये कृपाणें उठाई। यह थोड़ी आगे की बात है, यह अभी जो मैं आपको बता रहा हूँ, बहुत छोटे-छोटे सूत्र, ये हमें ले जाएँगे वहीं पर, जो हमारे पूर्वजों का वैभव था। हमारा गौरवान्वित उज्ज्वल भूतकाल था। हम वर्तमान में वही देखेंगे। और इसी पर हमारा भविष्य का चिंतन रहेगा। आप इस शिविर में आए हैं-कल को आप में से कुछ का विवाह होगा। अभी आप विद्याध्ययन भी कर रहे हैं। कोई नौकरी कर रहे हैं। कोई विवाह करेंगे, किसी ने कर लिया है, किसी के संतान हो गई है, किसी के होगी। बहुत सावधान रहने की आवश्यकता है। आपको सारा संसार देख रहा है। यहाँ बैठे हुए भी लोग हैं वो भी देख रहे हैं। वो रोटियाँ बनाने वाले हैं वो भी देख रहे हैं। और आप संसार में जाएँगे तो भी आपको देखेंगे कि आपने बातें तो ऐसी की और आपके जीवन में क्या है? सावधान रहने की आवश्यकता है कि मेरे कारण किसी का कोई पतन न हो जाए। यह विशेष तौर से आप इन ग्यारह दिनों में इस साधना से इन सूत्रों को ध्यान में रखेंगे।

मैं उम्मीद करता हूँ कि मेरी बात को मैं बड़े सरल ढंग से कह पाया हूँ। आपके हृदय की निर्मलता को नमस्कार करता हुआ आपमें संस्कारों के बीजारोपण का मैं स्वप्न देखता हूँ, उनका मैं स्वागत करता हूँ। क्षत्रिय युवक संघ ने आपके भाल पर तिलक लगाया। किसी व्यक्ति ने नहीं लगाया। व्यक्ति बदलते रहते हैं, संघ नहीं बदला है। क्षत्रिय युवक संघ ही हमको विदा करेगा। क्षत्रिय युवक संघ ही हमको शिक्षा देगा। कोई भी अपने ऊपर मत लेना। ईश्वर प्रणिधान की बात सदैव ध्यान में रखना। तो आज का किया गया स्वागत इन ग्यारह दिनों तक हमारे काम आएगा। जिस दिन विदा होंगे तब आप फिर एक बार इसको याद कर लेना कि क्या हमने इन चीजों का ध्यान रखा? ऐसा तो नहीं है कि हमारा जीवन ही बर्बाद चला जाए? यह ग्यारह दिन ही नहीं जा रहे हैं। यह ग्यारह दिन की असावधानी है या फिर जीवनभर की असावधानी हो जाए। जो आदमी ग्यारह दिन सावधानी नहीं रखता वह पूरा जीवन गफलत में जीता है। लोग जीते हैं और मर जाते हैं, बिना कुछ किए। ऐसे लोगों को भगवान अपना पात्र नहीं बनाता है। और हमारा अहोभाग्य कि परमेश्वर ने हमको ऐसी सद्बुद्धि दी, हमारे ऊपर इतनी कृपा है कि हमें यहाँ भेजने के लिये प्रेरणा दी। लोग कितनी-कितनी दूर से आए हैं, पाँच सौ, सात सौ, आठ सौ किलोमीटर से आए हैं। यहाँ इस वागड़ में (मेवाड़ में) भी बहुत से आपके जैसे भाई रहते हैं। उनमें से भी कुछ आए हैं और कुछ नहीं आ पाए हैं। उनको प्रेरणा नहीं होगी। यह प्रेरणा भी भगवान ने दी है। इस अहोभाव को स्मरण करते रहें। परमेश्वर की आपके ऊपर असीम कृपा की वर्षा हो रही है। आप भी उसका स्वागत करें। क्षत्रिय युवक संघ भी आपका स्वागत करता है।

गतांक से आगे

पूज्य श्री तनसिंहजी (के सम्बन्ध में)

''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

– चैनसिंह बैठवास

एक संगमरमर का पत्थर किसी कुशल शिल्पकार के हाथ में आ जाए और वह उसे हथौड़े व छैणी से उसके निकम्मे व जरूरत से ज्यादा हिस्से को कुतर कर उसी में से एक सुन्दर मूर्ति की रचना करता है, तब वह मूर्ति मन्दिर में भगवान के रूप में पूजी जाती है। उस संगमरमर के पत्थर ने हथौड़ी व छैणी की मार खाई, उसे सहन किया, तभी उसका निखरा रूप एक मूर्ति के रूप में प्रतिष्ठित हुआ। अगर मार बर्दाश्त न कर पाए तो वही संगमरमर का पत्थर रास्ते में लोगों की ठोकरें खाता पड़ा रहेगा और लोगों के लिये परेशानी का कारण बना रहेगा।

माँसा ने बालक तणेराज को अपने से दूर बाड़मेर रखकर शिक्षा की ओर अग्रसर किया ताकि वो पढ लिखकर योग्य बन जाए। उनका विद्यार्थी जीवन हर तरह से कठिनाइयों व पीड़ा से भरा था। उन्होंने वहाँ रहकर कष्टप्रद व दर्दनाक जीवन व्यतीत किया। उन्हें अपने विद्यार्थी जीवन में नाना प्रकार के अभावों से जूझना पड़ा था। अपने लाल को कष्टों में जीवन व्यतीत करते देख उनकी ममता पिघल जाती और पढाई छुड़वाकर अपने साथ रामदेरिया में ही रखने लगती या बालक तणेराज इन प्रतिकूल परिस्थितियों से घबराकर माँसा के पास ही रहने के लिये अड़ जाता या जिद कर बैठता तो आज पूज्य श्री को कोई नहीं जानता। उनकी पहचान मालाणी (बाड़मेर) तक ही सिमट कर रह जाती। आज पूज्य श्री ने हमारे दिलों में जो जगह बनाई है, जन-जन के दिलों में बसे हैं, यह कभी नहीं होता।

माँसा इस बात को भली-भाँति जानते थे कि अगर आगे बढ़ना है, पढाई करनी है तो सामने आने वाली कठिनाइयों व परेशानियों से गुजरना पड़ेगा और उन्हें सहन करना होगा ताकि अप्रिय तथा प्रतिकूल परिस्थितियों में रहना व उनका सामना करना सीखले और सभी परिस्थितियों में धैर्यवान और सहिष्णु बना रहे। इसलिये माँसा ने बाल्यकाल से ही बालक तणेराज को बाड़मेर में रखकर प्रतिकूल परिस्थितियों से गुजारा। ये उनके जीवन की परीक्षाएँ थी। संसार के सभी संतापों को हरने वाली माँ के संरक्षण व मार्गदर्शन में उन्होंने ये सभी परीक्षाएँ उत्तीर्ण की। माँसा के संरक्षण में उन्हें सब तरह का सकून मिलता रहा।

जिस तरह एक कुशल शिल्पकार हथौड़ी व छैणी से मूर्ति तरासता है, उसी तरह माँसा भी एक कुशल शिल्पकार की तरह बालक तणेराज को तरासती रही। माँसा उनकी अंगुली पकड़कर उन्हें उठना-बैठना, चलना-फिरना, खाना-पीना आदि सिखाने के साथ अपने वात्सल्य व आँचल की छाँह में सद्संस्कार देकर, कई छोटी-मोटी जानकारियाँ देकर अपने लाल को तरासती रही जिसके कारण वे आगे जाकर एक महापुरुष के रूप में उभरे।

सोने को निखारने के लिये उसे ताप, ताड़न, घर्षण और छेदन की प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है, तब वह कहीं जाकर खरा सोना बनता है। पूज्य श्री को भी खरा सोना बनाने के लिये उन्हें बाल्यकाल से ही ताप, ताड़न, घर्षण व छेदन की प्रक्रिया से गुजार कर उन्हें खरा सोना बनाया अर्थात् माँसा ने उन्हें बाल्यकाल से ही कष्टों, संघर्षों व विपरीत परिस्थितियों से गुजार कर कर्मठ, सशक्त व निर्भिक बनाया।

जीवन में आने वाली तकलीफों व कष्टों से हार न मानकर उनसे संघर्ष करना, जीवन में आने वाली समस्याओं से मुँह मोड़ने की बजाए उनका समाधान खोज निकालना, हिम्मत व पुरुषार्थ के बल पर आगे बढ़ना व कड़ी मेहनत करने की नींव माँसा के मार्गदर्शन में यहीं से पड़ी।

एक बालक को कष्टप्रद व पीड़ादायक काम थोड़े ही करने होते हैं, पर कुदरत ने ऐसा कहर ढाहा कि माँ-बेटे को ही अलग-अलग कर दिया। माँसा के गाँव रामदेरिया में रहने व बालक तणेराज के बाड़मेर रहने से

परिस्थितियाँ ही ऐसी बनगयी थी। इन परिस्थितियों ने ही उन्हें कष्ट व दर्दभरी जिन्दगी जीने के लिये मजबूर तो किया पर ये विपरीत परिस्थितियाँ ही आगे जाकर उनके लिये वरदान सिद्ध हुई।

माँसा हर संकट में, हर मोड़ पर पूज्य श्री तनसिंहजी के साथ ढाल बनकर खड़ी रही और उन्हें ऐसी मजबूती दी जिससे वे अपने लक्ष्य पर अडिग बने रहे। इसलिये माँसा के संरक्षण व मार्गदर्शन में पूज्य श्री ने जीवन में आने वाली हर प्रतिकूल परिस्थिति को हँसते-हँसते पार किया।

बालक तणेराज का विद्याध्यान का सफर नि:संदेह बड़ा कष्टप्रद व दर्दभरा था, पर यह कष्टप्रद व दर्दभरा सफर आगे जाकर उनके जीवन में बड़ा काम आया। जीवन में आने वाली इन कष्टभरी तकलीफों ने उन्हें मेहनती, परिश्रमी, कर्मठ, संघर्षशील व पुरुषार्थी बना डाला।

बाल्यकाल की तकलीफों और कठिनाइयों ने उन्हें इतना कष्ट सहिष्णु और धैर्यवान बना डाला कि आगे जीवन में कैसी भी विपरीत परिस्थितियाँ आयी, उनकी जड़ों को लेशमात्र भी हिला न सकी। हर विपरीत परिस्थिति में वे सदैव अडिग बने रहे। कोई भी परिस्थिति उन्हें अपने पथ से विचलित नहीं कर पायी। यहीं से उनकी मजबूत नींव पड़ी।

माँसा ने बाल्यकाल से ही पूज्य श्री को कठिनाइयों, संघर्षों व विपरीत परिस्थितियों से गुजार कर इतना मजबूत बना दिया था कि-

आँधियाँ आये और जो झुके नहीं, तूफान आवें पर जो टूटे नहीं, काँटे चुभें और जो रुके नहीं; आहें और आँसू जो निकलें, तो उन्हें पीकर मुस्करा दे; नफरत के प्याले पीकर जो उन्हीं प्यालों में प्रेम का जल भरकर मनुहार करते हों, संसार उन्हीं के अप्रत्याशित व्यवहार को देखने के लिये रुका करता है।

ये पंक्तियाँ पूज्यश्री की हैं पर ऐसा बनाया माँसा ने। इसके पीछे लिखने की प्रेरणा माँसा की ही थी। पूज्यश्री जो भी थे उनके पीछे माँसा का हाथ था। ***माता निर्माता भवति:।***

(क्रमश:)

संन्यासी या कायर

आचार्य मध्व बदरीनाथ की यात्रा पर थे। साथ में संन्यासी शिष्य भी थे। एक जगह डाकुओं ने उनके समूह को घेर लिया। डाकुओं के हाथों में कुल्हाड़ियाँ थीं। सोचा-ये तो बेचारे निहत्थे हैं, अभी मात खा जाएँगे।

आचार्य मध्व ने अपने शिष्य उपेन्द्र तीर्थ को ललकारा-''उपेन्द्र, तुम्हारे साथियों पर आपत्ति आई है और तुम खड़े-खड़े मुँह की ताकते रहोगे? संन्यास-साधुताई का अर्थ कायरता नहीं है। तुमने जिन हाथों से संन्यास का दण्ड पकड़ा है, उनमें कुल्हाड़ी पकड़ने का भी सामर्थ्य होना चाहिए।''

शिष्य उपेन्द्र तीर्थ नि:शस्त्र प्रतिकार करने की कला में माहिर था। उसके दाव-पेंच और फुर्तीलेपन से आचार्य परिचित थे। गुरु का आदेश पाते ही उपेन्द्र तीर्थ ने गजब की फुर्ती के साथ एक ही वार में एक डाकू की नाक फोड़ दी। वह लहूलुहान होकर गिरा। दूसरे को ऐसी मार लगाई कि वह लुढ़ककर पास की खाई में जा गिरा। अब तो उपेन्द्र तीर्थ ने लपककर एक डाकू से कुल्हाड़ी ही छीन ली। उसके हाथ में कुल्हाड़ी देखकर बाकी डाकुओं के होश उड़ गए। उपेन्द्र को डाकुओं पर भारी पड़ता देख अन्य शिष्यों का जोश भी जाग उठा। सबने मिलकर डाकुओं के छक्के छुड़ा दिए। डाकू दुम दबाकर भाग गए।

आचार्य मध्व ने अपने शिष्यों को समझाया-''अत्याचार और शोषण को चुपचाप सहन करना धार्मिकता नहीं, बल्कि कायरता है। अहिंसा, दुर्बलता का नाम नहीं है।''

मेरी साधना

लेखक–पू. आयुवानसिंहजी, गुजराती भाष्य–श्री बलवंतसिंह पांची, हिन्दी अनुवाद–प्रोफेसर रूपसिंह लिम्बड़ी

अवतरण– 1

आत्म–प्रबोध के प्रथम जागरण की अनुभूति मुझे हृदय के आवेग, लक्ष्य की अस्पष्टता एवं कामनाओं के बाहुल्य के रूप में हुई। अहं का बहुपथ–गामिनी आकांक्षाओं से संयोग हुआ।

अल्हड़ उत्साह, बाल आशा, मधुर वेदना और भोले विश्वास के उस झूले में झूलने को तत्पर हुआ जिसमें अनुभव और परीक्षण की डोरी का अभाव था। परिणाम शून्य। फिर भी अन्तर्चेतना से ध्वनित होकर कोई निरंतर बोल रहा था–

''मैं भी कुछ करूं।''

ऊँचे उड़ूं कर्तव्य व्योम में।
नाम उज्ज्वल करूं कौम का भोम में।।

इस अवतरण में लेखक ने संवेदनशील युवा मन का आलेखन किया है। यह पुस्तक क्षत्रिय समाज को लक्ष्य में रखकर लिखी गयी है। इसे समझने का हम प्रयत्न करेंगे। संसार का इतिहास संवेदना–प्रधान युवाओं के अद्‌भुत साहस कर्मों से भरा पड़ा है। ध्रुव और अभिमन्यु का इतिहास इस बात की गवाही देता है। स्वतंत्रता संग्राम में रामप्रसाद बिस्मिल, भगतसिंह आदि का बलिदान भी उनकी संवेदना का ही परिणाम है।

ऐसे ही संवेदना–प्रधान मानस का सृजन है ***श्री क्षत्रिय युवक संघ।*** स्व. पू. तनसिंहजी ने अपनी बाईस वर्ष की युवा आयु में क्षात्रधर्म का आश्रय लेकर प्राणी मात्र के हित एवं कल्याण की अनुपम और अभूतपूर्व विचारधारा समाज को भेंट की।

इस अवतरण का प्रथम शब्द आत्म प्रबोध (आत्मज्ञान) समाज सापेक्ष है। हृदय के आवेग, लक्ष्य की अस्पष्टता और कामनाओं के बाहुल्य बड़े चोटदार शब्द हैं। भिन्न क्षेत्रों में इन शब्दों का भिन्न–भिन्न अर्थघटन हो सकता है, किया जा सकता है। यहाँ पर हम अपने समाज, अपनी जाति के लिये ही इन शब्दों का अर्थघटन करेंगे। हमारी जाति के एक–एक युवा के दिल में हलचल तो हो रही है। उछाल भी आ रहा है, कुछ करने का साहस करने के भाव भी उठ रहे हैं किन्तु लक्ष्य का अभाव है। अस्पष्टता है। कुछ करना है, पर ऐसे करना है, इस प्रकार का कोई लक्ष्य निश्चित नहीं होता है। साथ ही अहं और अनेक प्रकार की महत्त्वाकांक्षों के योग के कारण मार्ग निश्चित नहीं हो पा रहा है।

अल्हड़ उत्साह, बाल आशा, मधुर वेदना और भोला विश्वास, इन शब्दों द्वारा साधक की मन:स्थिति का वर्णन किया गया है। अल्हड़पन और बाल आशा में बचपन एवं किशोरावस्था की स्वप्निल कल्पनाएँ हैं, जिसमें कुछ भी असंभव नहीं लगता। मधुर वेदना वह पीड़ा है जो स्वेच्छा से स्वीकार की गई है। यह शहीदों की वेदना है जिसमें घावों की वेदना भी मधुर लगती है क्योंकि इसमें मातृभूमि की रक्षा का लक्ष्य है।

ये सारी बातें जल्दी समझ में आने वाली नहीं हैं। अपने बाल स्वभाव और अनुभव का अभाव होने से सब कल्पनाओं को शक्य, संभव माना जा रहा है। अभी उसमें वह विवेक जागृत नहीं हुआ है, जिससे संभव, असंभव का निर्णय कर सके।

केवल कल्पना से कोई परिणाम नहीं आता है। इन सभी भावों एवं उत्साह के उबालों का परिणाम–शून्य। फिर भी एक बात निश्चित होती है कि साधक के मन में एक विचार दृढ होता है कि 'मुझे कुछ करना है और उस दृढ विचार की ध्वनि वह सुनता है और निर्णय करता है–'मैं भी कुछ करूँ'।

जैसे बहुखंडीय आवास के द्वार जैसे–जैसे खुलते जाते हैं, वैसे–वैसे प्रत्येक खण्ड का अनुभव होता रहता है; उसी प्रकार आगे–आगे प्रत्येक अवतरण के भिन्न–भिन्न भावों एवं विचारों का अनुभव होता रहेगा। अभी तो परमेश्वर से प्रार्थना करें कि हमारे क्षत्रिय युवकों में संवेदना भर दे। जय संघशक्ति।

सार–राष्ट्र का गौरव युवा है। युवाओं का गौरव पराक्रम है।

अवतरण-2

बहु-दिशा-स्थित पथ निर्देशक स्थलों की ओर मैं स्वभावत: आकर्षित हुआ। प्रचण्ड-प्रकाश-राशि से उन्मीलित मेरे नेत्रों ने अपना स्वाभाविक धर्म छोड़ दिया। मैंने उस प्रकाश-पुँज में पथ-शोधन करना चाहा। देखा-प्रकाश के बाह्य आवरण से आच्छादित अन्धकार घनीभूत होकर बैठा है। कारण? अन्तर्वेदना की चिनगारी बहुत पहले ही नि:शेष हो चुकी थी।

प्रकाश की प्रचण्डता से खूब डरता हूँ।
प्रचण्डता से दूर सत्यशोधन करता हूँ।।

प्रथम अवतरण में हमने देखा कि हमारे युवा वर्ग में समाज कार्य, समाज सेवा के लिये बहुत छटपटाहट है। उनमें उत्साह है। आशा है। वेदना है। और विश्वास भी है। समाज को उन्नति के शिखर पर पहुँचाने की आकांक्षा उनमें जागृत हो चुकी है। किन्तु अपने भोलेपन के कारण अनेक कल्पनाओं में विहार कर रहे हैं। अनुभव के अभाव एवं लक्ष्य विहीनता तथा कसौटी के मानदण्ड की न्यूनता के कारण परिणाम शून्य रहा है। फिर भी उनमें लक्ष्य का भाव समाज कार्य के लिये उदित हो चुका है। वह चाहता है-'मैं भी कुछ करूँ।' यह मंत्र उसके दिल में गूंज रहा है।

इस पुस्तक के अवतरणों में परस्पर सम्बन्ध होने से प्रत्येक अवतरण को समझने के लिये, आगे पीछे के अवतरणों का संदर्भ उपयोगी रहेगा। अब आगे 'युवा' संज्ञा के स्थान पर 'साधक' संज्ञा को प्रयुक्त किया जायेगा।

साधक के समक्ष अनेक मार्ग हैं। साधना के क्षेत्र अनेक हैं। राजकीय, सामाजिक, शिक्षा एवं धर्म इत्यादि की तरफ साधक का आकर्षण रहता है। भिन्न-भिन्न क्षेत्र में काम करने वालों के बाह्य प्रभाव के प्रकाश की प्रचण्डता में साधक की आँखें अपना मार्ग ढूंढने का प्रयास करती है। लेकिन जब वह भीतर देखता है तो उसे राष्ट्रसेवा, समाजसेवा, संस्कृति रक्षा एवं धर्मोपदेश के आवरण के नीचे व्यक्तिगत हित, स्वार्थसाधन एवं अहं ही देखने को मिलता है। पूज्य श्री तनसिंहजी के गीत की वह पंक्ति याद आ जाती है,-

जगमग करते दीप घने रे,
दानवता के क्रूर बसेरे।

हमारा अनुभव है कि राष्ट्रसेवा की आड़ में तथाकथित राष्ट्रभक्त व्यक्तिगत हित और स्वार्थ साधन में डूबे हुए हैं। ठीक उसी प्रकार तथाकथित समाजसेवी, संस्कृति रक्षक और धर्मोपदेशक भी अपने-अपने स्वार्थ की साधना में लगे हुए हैं। प्रश्न उठता है कि ऐसा क्यों हो रहा है?

सच्चे साधक को उत्तर मिलता है-अन्तर्वेदना की चिनगारी बुझ गई है। हृदय संवेदनशून्य हो चुका है।

समाज सेवा के कार्य में लगने वालों में समाज की वेदना, पीड़ा की अनुभूति का अभाव है, यदि समाज की व्यथा उन्हें व्यथित नहीं करती तो समाज की सेवा नहीं हो सकती। हाँ, समाजसेवा का दंभ अवश्य हो सकता है और कभी-कभी दंभ वास्तविक से भी अधिक आकर्षक होता है। इसलिए उन दंभियों को अपनी स्वार्थ साधना में बहुत सरलता रहती है।

सामाजिक क्षेत्र में सेवा करने वालों के लिये प्रथम आवश्यक शर्त है-'समाज की व्यथा से व्यथित हृदय होना'। जय संघशक्ति!

सार-साधक वह है जो प्रलोभनों में नहीं फँसता।

अवतरण-3

अपनी मानस-वेदना ने मुझे निश्चल नहीं रहने दिया। मरु-प्रदेश में तृषित मृग की भाँति विवेक शून्य होकर मैं अन्धकार में पथ ढूंढने के लिये बाध्य हुआ। खूब भटका, ठोकरें खाकर धराशायी हुआ, मस्तक विदीर्ण हुआ, रुधिर बह चला। क्षीण-काय, पराजित-मना हो मैं कर्म-संन्यास की ओर उन्मुख हुआ; आत्म-लघुत्व की हीन मनोवृत्ति से पराभूत हुआ मैं अश्रुजल से असफलता-कालिमा को धोने लगा। कारण था-

सम्यक ज्ञान का अभाव

क्या करूँ मैं, मन व्याकुल है।
मार्ग पाने को अन्तर आकुल है।।

साधक को अनुभव होता है कि यदि अन्तर्वेदना की चिनगारी बुझ गई है तो फिर कुछ भी नहीं हो सकता है।

वह बहुत घूमता है, देखता है और अनुभव करता है कि कहीं भी पीड़ा नहीं है, व्यथा नहीं है किन्तु उसके अपने

भीतर अन्तर्वेदना की चिनगारी सुलग रही है, जल रही है, इसलिए वह कुछ करने की भावना के साथ घूम रहा है।

मरु-भूमि में तृषातुर मृग जैसे मृगजल के पीछे दौड़ता है, उसी तरह साधक दंभ और अहंकार के अंधकार में अपना पथ ढूंढने का प्रयास कर रहा है। खूब भटकता है। परेशान होता है। ठोकरें खाता है। लहूलुहान हो जाता है। तन थक जाता है। मन टूट जाता है। सोच रहा है-कहाँ जाऊँ? क्या करूँ? जहाँ भी जाता है-दंभ-आडम्बर, अहंकार, लोभलालच और छलकपट के सिवाय कुछ नहीं दिखता। अन्त में थककर अपनी पराजय स्वीकार करके लघुता-ग्रंथी का शिकार बनकर इस निर्णय पर आता है कि मैं कुछ नहीं कर सकता। मुझ में न तो वह शक्ति है, न वह सामर्थ्य है, न योग्यता है कि मैं कुछ कर सकूं फिर समाजसेवा का, राष्ट्रसेवा का सपना छोड़कर, भावना का त्याग करके, कर्म-त्याग, कर्म-संन्यास की तरफ बढता है और अपनी असफलता की कालिमा को धोने के लिये आँसू बहाता है। अपने आँसुओं से अपनी असफलता के कलंक को धोने लगा।

ऐसा कैसे हुआ? क्यों हुआ? उचित ज्ञान का अभाव था। आजकल अनेक संवेदनशील एवं भावुक कार्यकर्ताओं की ऐसी ही दशा होती है। वे भटक जाते हैं। कुछ करने की भावना रखने वाले युवकों को 'मेरी साधना' का ध्यानपूर्वक, एकाग्र मन से अध्ययन करने की आवश्यकता है। उसे समझे तथा धैर्य और हिम्मत से काम करे। जय संघशक्ति!

सार-आँसू बहा न बन्धु,
मेरी परम्परा शरमायेगी।

अवतरण-4

मेरे मानस-प्रदेश पर भौतिक विफलता के अवसान की सरिता दो धाराओं में प्रवाहित होने लगी। आत्म-विसर्जन की धारा का उद्‌गम मेरे मानस-स्थल का क्षुद्र अहं था। कर्म-त्याग की प्रेरकशक्ति थी मेरे द्वारा अनुभूत ज्ञान की अपूर्णता। अन्तर्द्वन्द्व की आँधी से मेरी आत्मा कंपित हो उठी। भीतर का सत्व विजयी हुआ, बोला-''दोनों ही मार्ग असत्य हैं। साधक! और प्रयत्न कर, वह स्थल दूर नहीं है, जहाँ सत्य और प्रकाश अखण्ड रूप से निवास करते हैं।''

छोडूं भ्रमणा छोडूं।
मालिक चींध्या राहे डग मांडूं।।

साधक खूब भटका, थक गया, हार गया, असफलता का अनुभव करने लगा। इस अनुभव से उसके मन में दो प्रकार के विचार उत्पन्न होने लगे। एक विचार है-आत्मबलि (आत्महत्या) का और दूसरा विचार है-कर्म त्याग का। साधारण मानव जब अपने प्राप्तव्य में असफल होता है, पराजित होता है, थक जाता है तब उसके मन में यही विचार आता है कि-'इस जीवन का क्या अर्थ है? मैं कुछ भी कर सका नहीं, इससे तो इस जीवन का न होना ही अच्छा है।' इसका कारण है-उसके अहं को ठेस लगती है। अहं घायल होता है। साधक को दूसरा विचार आता है कि इतना सब कुछ करने पर भी समाज में कोई परिवर्तन नहीं हो पाया। तो फिर इस प्रकार समय और शक्ति के व्यय का क्या प्रयोजन है? इससे तो अच्छा है, यह सब छोड़ दूँ।

इस विचार के पीछे जो प्रेरक बल है, वह है अनुभूत ज्ञान की अपूर्णता। धैर्य का अभाव। नव दीक्षित साधक अनुभव के अभाव के कारण कार्यसाधना छोड़ देने का विचार करता है। हम जब कहते हैं ज्ञान का अभाव तो हम किस ज्ञान की बात करते हैं? ज्ञान का मतलब है-अपना कर्तव्य ज्ञान, अपने स्वधर्म का ज्ञान। जिसे अपने स्वधर्म और अपने कर्तव्य कर्म का ज्ञान नहीं है वह अपने सामाजिक उत्तरदायित्व का त्याग कर देता है, लेकिन जो समझदार है, जिसे अपने सामाजिक ऋण का ज्ञान है, वह अपने सामाजिक उत्तरदायित्व से विमुख नहीं हो सकता है। उससे कभी भी सामाजिक, कृतघ्नता नहीं हो सकती। परन्तु परिस्थिति की प्रतिकूलता ने उसे विवश कर दिया है। उसके मन में आँधी उठती है, तूफान उठता है, एक झंझावात उठता है-'मैं क्या करूं?' उसकी आत्मा कांपने लगती है। वह न तो कार्य कर सकता है और न छोड़ सकता है। इस द्वन्द्व में उसके आंतरिक भाव की विजय होती है। उसकी

अन्तरात्मा कहती है तेरे दोनों विचार गलत हैं। न आत्महत्या करनी है न कर्मत्याग करना है। धैर्य से आगे बढता चल और थोड़ा अधिक प्रयत्न कर, सत्य और अखण्ड प्रकाश का उद्‌गम स्थान दूर नहीं है।

जब हमारे भीतर साधक की पीड़ा और व्यथा होगी और अपने सामाजिक उत्तरदायित्व को निभाने की निष्ठा होगी, तो फिर स्वयं परमात्मा हमारे पथ प्रदर्शक होंगे और हर प्रकार की सहायता करेंगे। जय संघशक्ति।

सार-सद्‌भावना का मार्ग ही सत्कर्म की ओर जाता है।

(क्रमशः)

पृष्ठ 4 का शेष

समाचार संक्षेप

जायल तहसील के छापड़ा में पारिवारिक स्नेह मिलन को सम्बोधित किया। कार्यक्रम में आसपास के गाँवों से समाज बन्धु भी उपस्थित रहे। 2 अगस्त की शाम नागौर शहर के टाउन हाल में पारिवारिक स्नेह मिलन हुआ। आसपास के सहयोगी भी इस कार्यक्रम में पहुँचे। 3 अगस्त को सुबह श्री बालाजी स्थित स्वामी अड़गड़ानन्द जी के आश्रम में स्वामी गुरुचरणानन्द जी के साथ आध्यात्मिक चर्चा की तथा फिर नोखा के कालका माता मंदिर में आयोजित स्नेह मिलन में सम्मिलित हुए। भोजन के बाद महिलाओं के स्नेह मिलन में भी सम्मिलित हुए।

नोखा से रात में बीकानेर पहुँचे और 4 अगस्त को पहले कार्यालय नारायण निकेतन की साप्ताहिक शाखा में तथा बाद में सहयोगियों के पारिवारिक स्नेह मिलन में भाग लिया। सायंकाल बीकानेर में श्री क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन की गतिविधियों की जानकारी प्राप्त की। 5 अगस्त को बीकानेर शहर की शाखाओं की सामुहिक शाखा में भाग लिया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के क्षेत्रिय प्रचारक दुर्गादास जी के आवास पर उनके पिताजी के देहान्त पर संवेदना प्रकट करने पहुँचे।

जैसलमेर शहर में स्नेह मिलन कार्यक्रम का आयोजन हुआ। जवाहिर शाखा, तनाश्रम शाखा, भटियाणी शाखा व वीर विक्रमादित्य शाखा के स्वयं सेवकों से मिलन कार्यक्रम राजपूत छात्रावास में रखा गया। जैसलमेर के तीन दिवसीय प्रवास में प्रांत प्रमुखों व स्वयंसेवकों से संघप्रमुख श्री ने संघ कार्य की जानकारी प्राप्त की। 9 अगस्त को राणी रूपादे विद्यालय में आयोजित विद्यार्थी स्नेह मिलन में भाग लिया।

अपने बाड़मेर प्रवास में आलोक आश्रम में चल रहे श्री क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन से सम्बन्धित स्वयंसेवकों के चार दिवसीय शिविर का अवलोकन किया, मार्गदर्शन दिया। बाड़मेर के निकट चल रहे शिविर में भी जाकर आए। एक दिन चोहटन के लिये रहा।

शिविर :

अगस्त माह में श्री क्षत्रिय युवक संघ के 39 शिविर सम्पन्न हुए। इनमें दो शिविर तो छोटे बालकों के लिये थे जो दो दिवसीय होते हैं। इनमें एक राजस्थान में और एक गुजरात में सम्पन्न हुआ।

पाँच शिविर बालिकाओं के थे जिनमें दो गुजरात में, दो राजस्थान में तथा एक कर्नाटका में सम्पन्न हुआ।

शेष 32 शिविर बालकों के थे जिनमें सात शिविर गुजरात में, एक एन.सी.आर. दिल्ली में, एक कर्नाटका में, एक मुंबई में, सात शिविर गुजरात में तथा 22 शिविर राजस्थान में सम्पन्न हुए। रविवार के साथ एक या दो छुट्टी का अवसर ढूंढकर शिविर सम्पन्न हुए।

धारा 370 :

जम्मू-कश्मीर से धारा 370 के बंधन हटाकर सरकार ने राष्ट्रहित में एक ऐतिहासिक तथा साहसिक निर्णय लिया है। राज्य सभा तथा लोकसभा, दोनों में ही दो तिहाई बहुमत से यह संकल्प पारित हुआ। अब भारत ने अखण्ड भारत का रूप लिया है। पूरे देश में एक ही संविधान होगा और एक ही राष्ट्रीय ध्वज होगा। राष्ट्रहित के इस फैसले का भी कुछ निहित स्वार्थी लोग विरोध कर रहे हैं। उनमें कुछ तो ऐसे बोल रहे हैं जैसे शत्रुओं को प्रोत्साहित कर रहे हों। आम भारतवासी जिसे राष्ट्रहित में मानता है, उसी का किसी न किसी बहाने से विरोध करना वे चाहे राजनैतिक लाभ मानते हों, पर वास्तव में उन लोगों के प्रति, उन दलों के प्रति आम लोगों का विरोध ही बढेगा। ऐसे निर्णयों को लागू करने में आतंकवादियों के प्रयास व स्थानीय अलगाववादियों के विरोध की आशंका रहती है, लेकिन नियंत्रण के लिये पुख्ता इंतजाम किया गया है, जो आवश्यक था।

गढ़ा-मण्डला की वीरांगना रानी दुर्गावती

– स्वामी गोपाल आनन्द बाबा

लक्ष्मी अहिल्या चेन्नमा मीरा दुर्गावती तथा।
कन्नगी च महासाध्वी शारदा च निवेदिता।।

आधुनिक काल की ये आठों प्रात: स्मरणीय मातृशक्ति हैं। इनका नित्य स्मरण करना जीवन में नई ऊर्जा प्रदान करता है। ये अखण्ड भारत की प्रतिनिधि भी हैं। उत्तर, दक्षिण, पूरब और पश्चिम।

रानी दुर्गावती गढ़ा राज्य की शासिका थी, जिसने मुगलों की साम्राज्यवादी नीति का विरोध किया था और मुगल सेना के संग युद्ध करते हुए आत्म बलिदान दिया था। घुड़सवार रानी अपने पीठ पर अपने पुत्र को बाँधे युद्धरत हुईं, सेना का नेतृत्व किया और अन्त में अपने हाथों से कटार चलाकर स्वयं को युद्ध की बलिवेदी पर न्योछावर कर दिया। कहते हैं-''रानी दुर्गावती रण में निकली हाथों में थी तलवारें दो, धरती काँपी आकाश हिला जब हिलने लगी तलवारें दो.....।''

वर्तमान मध्यप्रदेश की दूसरी राजधानी जबलपुर गोंड़ राजवंश की कथा बयान करती हुई दीख पड़ती है। मण्डला में रानी दुर्गावती का गढ़-किला व उनकी वीरांगना वेश में खड़ी प्रतिमा उनकी स्मृति को ताजा बना देती है। वराह गाँव के समीप उनकी समाधि (वास्तव में स्मारक) दुर्गावती की शौर्य-कथा सुना रही है।

जबलपुर से मण्डला की ओर जाने पर गौर नदी के पुल से उतरते ही दाहिनी ओर दस कि.मी. की दूरी पर अवस्थित है गाँव-बारहा। इसी के पास अवस्थित है वीरांगना रानी दुर्गावती की समाधि-स्मारक। यहाँ नर्रई के रणक्षेत्र में रानी दुर्गावती ने मुगल सेना से युद्ध करते हुए 24 जून, 1564ई. को अपने हाथों से कटार घोंपकर आत्मबलिदान दे दिया था। रानी दुर्गावती ने अपने महावत के कहने पर भी नर्रई की रणभूमि से निकलने से मना कर दिया था।

दुर्गावती बुन्देलखण्ड या यों कहें चन्देल राजवंश की भूमि जेजाकभूंक्ति प्रदेश (जूझौति) के राठ-महोबा के एक चन्देल राजवंश के राजा शालिवाहन की पुत्री थी। उसे गोण्ड राजवंश के वीर राजकुंवर दलपतिशाह से प्रेम हो गया जो गढ़ा राज्य (गोंड़वाना) के पराक्रमी शासक संग्रामशाह के पुत्र थे। दुर्गावती की जिद के कारण सन् 1542 ई. में दोनों का विवाह दोनों राजघरानों की मर्जी से सम्पन्न हो गया। दुर्गावती चन्देलों की अन्तिम कड़ी (उत्तराधिकारी) मानी जाती है। वह गोंड़ राजवंश की भी अन्तिम कड़ी सिद्ध हुई।

संग्रामशाह की मृत्यु के बाद दलपतिशाह गढ़ा राज्य का उत्तराधिकारी बना। वह सात वर्ष ही शासन कर सका, क्योंकि सन् 1550 ई. में उसकी एकाएक मृत्यु हो गई। तब उसका अल्पायु पुत्र शासक (राजा) बना। लेकिन शासन की बागडोर राजमाता दुर्गावती को सम्भालनी पड़ी। रानी दुर्गावती का राज्य सतपुड़ा और विंध्याचल को समेटे हुए लगभग पौने दो लाख वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में फैला हुआ था। उन्होंने चौदह वर्ष गढ़ा राज्य का शासन सम्भाला और इस कालखण्ड में उन्होंने भारतवर्ष के इतिहास के पन्नों में शौर्य और बलिदान की अनोखी गाथा लिख दी। उस कालखण्ड में भारत के दक्षिणी भाग में केवल दो ही राज्य (हिन्दू राजवंशों द्वारा शासित) विशालता से कायम थे-एक दक्षिण का विजयनगर साम्राज्य और दूसरा मध्यांचल का गढ़ा साम्राज्य। यह भी संयोग है अथवा विडम्बना कि दोनों विशाल साम्राज्यों का अन्त मात्र एक वर्ष के अन्तर में हो गया। गढ़ा राज्य सन् 1564 ई. में और विजयनगर राज्य सन् 1565 ई. में।

मुगल बादशाह जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर सन् 1556 ई. में दिल्ली के राजसिंहासन पर बैठा और आगरा को राजधानी बनाई। उसने साम्राज्य विस्तार की नीति अपनाई। भारत के छोटे-बड़े राज्य और पश्चिम व उत्तर के राज्य भी उसके आधीन हो जाएँ यह प्रयत्न शुरू किया। मुगल सेनापति आसफ खाँ ने सन् 1564 ई. में

ग्रीष्म ऋतु में गढ़ा राज्य पर आक्रमण कर दिया। मण्डला का किला नर्मदा नदी के तट पर अवस्थित था, अब भी है। उस समय रानी दुर्गावती अपने सैनिकों के साथ दमोह के पास सिंगौरगढ़ में थी। अधूरी तैयारी के कारण रानी सिंगौरगढ़ से सेना सहित दक्षिण की ओर गढ़ा के पास के वन क्षेत्र की ओर चल पड़ी। उन्होंने नर्मदा और गौर नदियों के बीच में बारहा नामक गाँव के पास नर्रई के मैदान में शिविर डाल दिया। तब आसफ खाँ भी मुगल सेना के साथ गढ़ा की ओर रवाना हो गया।

नर्रई के युद्ध मैदान में प्रथम लड़ाई में रानी की सेना ने मुगल सेना को पीछे हटने पर मजबूर कर दिया। रानी की इच्छा थी कि रात में ही आसफ खाँ पर आक्रमण कर दिया जाए, नहीं तो सुबह शत्रु तोपखाने से घाटी की किलेबंदी कर लेगा। दुर्भाग्य से रानी की इच्छा पर एक राय नहीं बन पाई। दूसरे दिन वही हुआ जिसकी आशंका रानी को पहले ही हुई थी। सुबह होते ही आसफ खाँ तोपखाना लेकर आ गया। रानी अपने हाथी सरमन पर बैठकर युद्ध के लिये तत्पर हो गई। युद्ध के समय ही रानी को तीर लग गया और वह बेहोश हो गई, यह देखकर उनकी सेना के पैर उखड़ने लगे। लेकिन कुछ ही समय में रानी को होश आ गया, परन्तु उन्हें अब लगने लगा कि अब हार सुनिश्चित है। तब उन्होंने अपने महावत आधारसिंह को कहा कि वह उनकी कटार से उन्हें मार डाले, पर वह तैयार नहीं हुआ। तब रानी ने स्वयं कटार द्वारा आत्मघात कर लिया।

नर्रई का युद्ध जीतकर आसफ खाँ मुगल सेना के साथ चैरागढ़ के किले की ओर बढ़ा जहाँ पर दलपतिशाह का पुत्र वीरनारायण और उसके विश्वस्त शरण लिए हुए थे। वीरनारायण व उसके सैनिकों ने मरणान्तक युद्ध किया और वीरगति को प्राप्त हुए। वहाँ की सभी स्त्रियों ने जौहर व्रत का पालन किया, धधकती चिता में स्वयं को न्योछावर कर दिया।

तत्पश्चात् विशाल गढ़ा साम्राज्य को मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया। गढ़ा राज्य लगभग सवा दो सौ वर्ष तक मुगलों के अधीन रहा। पश्चात् सन् 1780 ई. में मराठों ने इसे अपने अधिकार में ले लिया।

इस संदर्भ में मैं महाराणा प्रताप की नीति की तारीफ करना आवश्यक समझता हूँ। सन् 1564 ई. गढ़ा राज्य की पराजय के ठीक 12 वर्ष पश्चात् मुगल सेना ने आसफ खाँ (सेनापति) के नेतृत्व में, हल्दीघाटी के युद्ध में, महाराणा की मेवाड़ी सेना के संग युद्ध किया। नर्रई-युद्ध की ही तरह हल्दीघाटी-युद्ध में शौर्य की महान इबारतें लिखीं गईं। युद्ध की अनहोनी की आशंका से महाराणा प्रताप को उनके सरदारों ने युद्ध भूमि से बाहर किया और मरणान्तक युद्ध किया। प्रताप ने सरदारों की बात स्वीकार ली। मुगल युद्ध में पराजित मना हो गए थे, क्योंकि महाराणा उनके हाथ नहीं आए। मुगल सेना राजपूत सेना की मार से त्राहि-त्राहि करते हुए अकबर के पास पहुँची थी और सलीम भी चुप था। प्रताप की इस युद्ध भूमि से टल जाने की नीति से मेवाड़ की प्रजा ने उन्हें ही अपना शासक माना, सहयोग किया। प्रताप केवल चित्तौड़ छोड़कर बाकी का समस्त मेवाड़ पुन: प्राप्त कर सके। जबकि गढ़ा-मण्डला की रानी दुर्गावती ने अपने महावत आधारसिंह का कहा न मानकर रणभूमि में ही डटी रहना स्वीकार किया और मृत्यु को प्राप्त हुई। महावत कहता रहा कि मैं युद्ध के मैदान से आपको ''राजमाता'' बाहर कर देता हूँ, ताकि पुन:शक्ति प्राप्त कर इस साम्राज्यवादी मुगल से युद्ध जारी रख गढ़ा राज्य को रख सकें। लेकिन वह न मानी, अन्यथा गढ़ा राज्य का इतिहास भी दूसरा बनता। वीरांगना दुर्गावती (राजपूतानी) ने चौदह वर्ष सुशासन चलाया और प्रथम युद्ध में घोड़े पर बैठ दोनों हाथों से तलवार का वार करते हुए युद्ध किया और जीती। उनकी बात मानकर उनके सरदारों ने रात्रि में ही आसफ खाँ पर आक्रमण किया होता तो इतिहास दूसरा बनता, पराजय नहीं होती? फिर भी इस प्रात: स्मरणीया देवी को शत् शत् नमन। ''दुर्गा भारत की शान थी तू, हम हिन्दुओं के पत की आन थी तू, हमको याद अभी तक है, तेरी खूनी तलवारें दो। धरती कांपी आकाश हिला, जब हिलने लगी तलवारें दो।''

गतांक से आगे

आध्यात्मिक अनुभूतियों की सत्यता

– स्वामी यतीश्वरानन्द

मनोराज्य की अलौकिक घटनाओं का रहस्य :

चेतना के अनेक स्तर हैं। इन्द्रियों का वह स्तर जिसमें हम भौतिक वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त करते हैं, एक स्तर है। चिन्तन करते अथवा दिवास्वप्न देखते समय हम कुछ समय के लिये मानसिक स्तर पर जीते हैं। लेकिन सामान्यत: हम इस स्तर का कुछ अंश ही जानते हैं। हम अपने मन के बारे में बहुत कम जानते हैं और महत् नामक इस विराट् समष्टि मन के बारे में तो लगभग कुछ भी नहीं जानते, जिसके हमारे व्यष्टि मन अंश है। उसमें कौनसी शक्तियाँ छुपी हुई हैं, वहाँ कैसी विचित्र घटनाएँ होती रहती हैं, इसके बारे में हम सामान्यत: बहुत कम जानते हैं। जिस प्रकार हम भौतिक जगत् की शक्तियों का परिचालन कर सकते हैं, उसी प्रकार प्राण अथवा मानसिक शक्ति का भी परिचालन कर सकते हैं। कुछ लोगों को यह क्षमता अपने आप प्राप्त हो जाती है। वारसा में मैं एक महिला से मिला जो वस्तुओं के अज्ञात स्वरूप को जान जाती थी। वह बिगड़ी मशीन की त्रुटि का पता लगा लेती थी। स्वामी विवेकानन्द ने हैदराबाद के एक व्यक्ति के बारे में कहा है जो न जाने कहाँ से ताजे गुलाब, अंगूर तथा और भी बहुत सी चीजें ला सकता था।

सभी में मानसिक शक्ति है। प्राण सभी में कार्यरत है। अन्तर केवल इतना है कि अधिकांश लोगों में वह सांसारिक सफलता और वैषयिक सुखों की पूर्ति की दिशा में पूरी तरह नियोजित है। इस क्षय को रोकने पर मानसिक शक्ति हममें संचित होने लगेगी। तब हमें यह ज्ञात होगा कि इसे आध्यात्मिक दिशा में कैसे नियंत्रित किया जाए। इसके लिये हमें आध्यात्मिक व्यक्तियों के मार्गदर्शन की आवश्यकता है। अन्यथा संचित मानसिक शक्ति अन्य दिशाओं में प्रवाहित होती है तथा हमें कुछ क्षुद्र सिद्धियाँ प्राप्त हो सकती हैं। हम दूर-दर्शन अथवा दूरश्रवण अथवा दूसरों के विचारों को जानने में समर्थ हो सकते हैं। इनसे कुछ समय के लिये हमारा मनोरंजन भले ही हो, पर इनका कोई उच्च आध्यात्मिक मूल्य नहीं है। ये सत्य के साक्षात्कार के हमारे मार्ग में बाधाएँ ही हैं। सिद्धियाँ हमें पूर्णता, आनन्द और दु:खों से मुक्ति प्रदान नहीं करतीं। वे हमें अधिक अहंकारी बनाती हैं।

ज्ञानी महापुरुष इन सिद्धियों की ओर बहुत कम ध्यान देते हैं। यदि वे उन्हें प्राप्त करते हैं तो वे उनका दूसरों के कल्याण के लिये बहुत सावधानी से उपयोग करते हैं। स्वामी ब्रह्मानन्द आध्यात्मिक शक्ति के भण्डार थे जिसका उन्होंने दूसरों के कल्याण के लिये सावधानी से उपयोग किया था। उनमें गहरी मानसिक अन्तर्दृष्टि थी। एक दिन उन्होंने एक युवक को चेतावनी देते हुए कहा : सावधान, तुम्हारे चारों ओर एक गहरा मेघ छाया हुआ है, जो लगभग चालीस वर्ष की उम्र में व्यक्त होगा। वह युवक स्वामीजी की चेतावनी के समय के आसपास पागल हो गया और मर गया।

स्वामी ब्रह्मानन्द अपने शिष्यों के भूत और भविष्य को देख सकते थे। जब मैं सर्वप्रथम उनसे मिला तब मैं कालेज का युवा छात्र था। मैं अपने एक मित्र के साथ बलराम मन्दिर में उनके दर्शन करने गया। उन्होंने मेरे मित्र को अपना हाथ दिखाने को कहा। उसकी हथेली की ओर देखकर उन्होंने कहा, ''काम तुम्हारे लिये कुछ बाधा पैदा करेगा, लेकिन यदि श्रीरामकृष्ण की कृपा होगी तो वह दूर हो जाएगा।'' लेकिन स्वामी ब्रह्मानन्द ने स्वामी प्रेमानन्द के विनती करने पर भी मेरा हाथ नहीं देखा। मैं बहुत उदास हो गया, लेकिन जब मुझे यह पता चला कि स्वामी ब्रह्मानन्द ने उनके सेवक से कहा है कि मैं संन्यासी बनूंगा तो मैं अत्यन्त प्रसन्न हुआ और स्वयं को धन्य समझा। उनकी भविष्यवाणी सत्य हुई। मैं संन्यासी बना और मेरा मित्र गृहस्थ बना, पर वह महान् भगवत्-भक्त बना रहा।

1917 में बंगलौर में रहते समय मैं टायफाइड के ज्वर से आक्रान्त हुआ। मुझे अस्पताल में भर्ती किया गया। एक दिन प्रात:काल एक वृद्ध को लाकर मेरे पास के बिस्तर पर रखा गया। सन्ध्या को उसकी मृत्यु हो गई। मुझे मृत्यु का भय नहीं था, लेकिन तीव्र शारीरिक वेदना मेरे लिये असह्य हो रही थी। तब मैंने सोचा कि इससे तो मर जाना ही अच्छा है। इस विचार के प्रबल होते ही मुझे स्वामी ब्रह्मानन्द के दर्शन हुए। उन्होंने कहा-''तुम मर कैसे सकते हो। अभी तुम्हें श्रीरामकृष्ण का कार्य करना है।'' यह कहकर वे अदृश्य हो गए। इस अनुभव से मुझमें संपूर्ण परिवर्तन आ गया। मैं महान् शान्ति और गहरे शरणागति के भाव से पूर्ण हो गया। मेरा रोग भी ठीक होने लगा। स्वामी ब्रह्मानन्दजी के कई शिष्यों को ऐसे अनुभव हुए हैं। उनमें महान् शक्तियाँ थीं, लेकिन उन्होंने उनका उपयोग समझदारी के साथ केवल दूसरों के कल्याण के लिये किया।

सिद्धियाँ कई प्रकार की होती हैं। श्रीरामकृष्ण की जीवनी में हमें चन्द्र और गिरिजा नामक दो युवकों का उल्लेख मिलता है, जिनका परिचय उनकी गुरु भैरवी ब्राह्मणी ने श्रीरामकृष्ण से कराया था। चन्द्र अपने पास एक चमत्कारी गेंद रखता था, जिसकी सहायता से उसे मानव दृष्टि से अचानक ओझल होने की शक्ति प्राप्त हो गई थी। लेकिन उसने उच्चकोटि की चित्तशुद्धि प्राप्त नहीं की थी और इसलिए वह दूसरों के घर में बिना दिखे प्रविष्ट होने के लिये इस शक्ति का दुरुपयोग करने लगा। वह शीघ्र कामग्रस्त हो गया और फलस्वरूप उसकी शक्ति नष्ट हो गई। दूसरे युवक गिरिजा के पास अन्य सिद्धि थी। एक रात को उसने श्रीरामकृष्ण के समक्ष इसका प्रदर्शन किया था। घना अंधेरा था और श्रीरामकृष्ण को शम्भु मल्लिक के बगीचे से दक्षिणेश्वर जाने का मार्ग नहीं सूझ रहा था। गिरिजा, जो श्रीरामकृष्ण के साथ था, पीछे घूमकर खड़ा हो गया और उसकी पीठ से प्रकाश की एक चौड़ी चमकीली किरण निकली, जिससे काली मन्दिर के फाटक तक का पूरा मार्ग आलोकित हो गया। परम योगी श्रीरामकृष्ण ने कभी भी इस तरह की क्षुद्र सिद्धियों का प्रदर्शन नहीं किया। प्रस्तुत प्रसंग में श्रीरामकृष्ण ने चन्द्र और गिरिजा की सिद्धियों को स्वयं में खींच लिया और इस तरह उनके मन को ईश्वराभिमुखी बनाया।

सभी आध्यात्मिक पुरुषों ने सिद्धियों को महत्त्व देने की निन्दा की है क्योंकि ये साधक को उसके मुख्य आध्यात्मिक पथ से भ्रष्ट कर देती हैं तथा अन्त में उसका पूर्ण विनाश कर सकती है। नियमित साधना करने वाले सभी निष्ठावान साधकों को मनोजगत की अनुभूतियाँ सामान्यत: होती हैं। साधक को घण्टियों की ध्वनि अथवा ब्रह्माण्ड में निरंतर स्पन्दित होती महान् अनाहत ध्वनि सुनाई दे सकती है। अथवा उसे रहस्यमय अन्तर्ज्योति का दर्शन हो सकता है। ये सारी बातें इस बात के संकेत हैं कि तुम सही मार्ग पर हो। उनकी इतनी ही उपयोगिता है। हमें मार्ग-चिह्नों को मार्ग नहीं समझना चाहिए। यौवन में स्वामी विवेकानन्द को अद्भुत आध्यात्मिक अनुभूतियाँ होती थीं। एक बार उन्हें दूरदर्शन की शक्ति प्राप्त हुई थी। युक्तिवादी होने के कारण उन्होंने अपने अनुभवों को परखा और उन्हें सत्य पाया। लेकिन जब इस बारे में उन्होंने श्रीरामकृष्ण से कहा तो श्रीरामकृष्ण ने कुछ दिनों के लिये ध्यान न करने की सलाह दी, जिससे वह शक्ति चली जाए।

बहुत से लोग अशरीरी भूत-प्रेत में रुचि रखते हैं। सच्चे साधक को इनसे कोई लेना-देना नहीं होता और वह इन रहस्यमय घटनाओं से दूर ही रहता है। लेकिन मानव स्वभाव में एक अशमनीय जिज्ञासा रहती है और बहुत से लोग अपना अमूल्य समय सच्चा आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने में बिताने के बदले 'प्रेतविद्या' में व्यर्थ गँवाते हैं। आपने स्वामी अभेदानन्द की पुस्तक ''मृत्यु के पार'' पढ़ी होगी, जिसमें उन्होंने प्रेतवादियों की कई बैठकों में भाग लेने का वर्णन किया है। भारत में यदि कोई व्यक्ति प्रेत ग्रस्त होता है तो उसे तत्काल किसी मन्दिर में अथवा झाड़-फूंक करने वाले ओझा के पास ले जाया जाता है और उस विपदा से मुक्ति दिखाई जाती है। लेकिन अमेरिका में वह ''मीडियम'' बन जाता

है और इस तरह पैसे कमाता है। माध्यम बनने की बात सत्य भले ही हो, लेकिन इन बातों के साथ खिलवाड़ करना व्यर्थ समय बर्बाद करना है। श्रीरामकृष्ण के निरंजन नामक एक शिष्य थे। श्रीरामकृष्ण के पास आने के पूर्व वे एक प्रेतवादियों के समूह में ''माध्यम'' का कार्य करते थे। जब श्रीरामकृश्ण को यह बात पता चली तो उन्होंने युवक को तत्काल वह कार्य बन्द करने को कहा। उन्होंने उनसे कहा-''वत्स! भूत-प्रेतों का चिंतन करने पर तुम भूत-प्रेत बन जाओगे और यदि तुम भगवान् का चिंतन करोगे तो तुम्हारा जीवन दिव्य हो जाएगा।''

श्रीरामकृष्ण की जीवनी में हम पाते हैं कि उनका सामना अनेक प्रकार की प्रेतात्माओं से हुआ था। उनके गुरु तोतापुरी का भी दक्षिणेश्वर में एक भूत से सामना हुआ था। दक्षिणेश्वर काली मन्दिर में एक भैरव रहता था। वह दूसरों से अदृश्य था। एक दिन जब तोतापुरी पंचवटी में ध्यान कर रहे थे, तब उन्होंने एक लम्बी धुंधली आकृति को वृक्षों की शाखाओं से उतरते देखा। तोतापुरी किंचित मात्र भी विचलित नहीं हुए। उन्होंने रहस्यमय आगन्तुक से कहा, ''ठीक है, तुम और मैं एक ही हैं। तुम ब्रह्म की एक अभिव्यक्ति हो, मैं ब्रह्म की दूसरी अभिव्यक्ति हूँ। आओ, बैठो और ध्यान करो।'' भैरव अट्टहास कर उठा और अदृश्य हो गया।

इन ''आत्माओं'' में समय व्यर्थ गँवाने के बदले हमें अपनी आत्माओं की आत्मा-परमात्मा की ओर जाना चाहिए जो आनन्द और शान्ति का परम कारण है। हमें मनोजगत् का अतिक्रमण करना, उसे एक ओर छोड़ना सीख लेना चाहिए तथा सत्य परमात्मा के स्तर पर उठना चाहिए, जहाँ व्यष्टि-जीव समष्टि-परमात्मा का संस्पर्श प्राप्त करता है। जब तक यह मिलन नहीं होता, तब तक आत्मा की प्यास बनी रहती है और जब तक यह बनी रहेगी, तब तक सच्ची शान्ति और पूर्णता प्राप्त नहीं हो सकती। आत्मा को परमात्मा का संस्पर्श होना चाहिए; सच्ची आन्तरिक ज्योति से हृदय के अन्धकारमय कक्ष को आलोकित होना चाहिए। तभी मानव, जीवन के दु:खों का अतिक्रमण कर सकता है। सच्ची आध्यात्मिक अनुभूति सीधे परमात्मा से ही आती है। वह सामान्य मन और बुद्धि से परे है। जैसा कि महान् सूफी साधक अल-गजाली ने कहा है :

एकान्त में मेरे सामने ऐसी बातें प्रकट हुईं, जिनका वर्णन करना या निर्देश करना असम्भव है। अन्तर्दृष्टि एक ज्योति से आलोकित होती है जो गूढ़ बातों और वस्तुओं को प्रकट करती है जिन्हें बुद्धि नहीं जान सकती। सूफियों की साधना-पद्धति से होने वाला परिवर्तन अपने हाथ से किसी वस्तु को छूने की तरह प्रत्यक्ष अनुभूति है।

महान् निओ-प्लेटोनिक साधक-योगी प्लोटिनस ने कहा है :

तुम पूछते हो, हम अनन्त को कैसे जान सकते हैं? मेरा उत्तर है : युक्ति के द्वारा नहीं। वस्तुओं की परिभाषा और वर्गीकरण करना युक्ति का कार्य है। अनन्त को उसकी वस्तुओं की श्रेणी में नहीं डाला जा सकता। तुम अनन्त की धारणा बुद्धि से उच्चतर क्षमता के द्वारा, एक ऐसी अवस्था में प्रवेश करके प्राप्त कर सकते हो, जिसमें तुम अपनी सीमित सत्ता नहीं बने रहते, जिसमें परमात्मा की सत्ता का तुम्हारे साथ सम्बन्ध होता है। ***(क्रमश:)***

आपको अपना लाभ स्वयं संभालना होगा। दुर्बलताओं को अपने हृदय से स्वयं बाहर निकाल फेंकना होगा। अपनी शक्तियों में श्रद्धा जागृत करनी होगी। जब आप दोषदर्शी स्वभाव से मुख मोड़कर स्वयं अपनी दुर्बलताओं को दूर करने का प्रयत्न करेंगे, तभी भीतर से परिवर्तन प्रारम्भ होगा। मनुष्य अपनी दुर्बलताओं को निरंतर व नियमित प्रयत्न, उद्योग और सतत् अध्यवसाय से दूर कर सकता है।

- डॉ. रामचरण 'महेन्द्र'

हल्दीघाटी का विस्मृत, बलिदानी रामशाह तोमर

– श्री गोपालसिंह राठौड़

सन् 1526 में पानीपत के युद्ध में बाबर के विरुद्ध इब्राहिम लोदी के पक्ष में ग्वालियर के तौमर राजा मानसिंह के पुत्र विक्रमादित्य लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हुए उस समय उनके पुत्र रामसिंह तौमर लगभग 12 वर्ष के थे। बाद में ग्वालियर पर मुगलों का अधिकार हो गया। रामसिंह तौमर ने जब जवानी में कदम रखा तो सैन्य संग्रह कर सन् 1540 में चम्बल के बीहड़ों से निकलकर ग्वालियर पर अधिकार की कोशिश की लेकिन सफलता नहीं मिली। चम्बल क्षेत्र के राजपूतों को साथ लेकर सन् 1558 तक अर्थात् 18 वर्ष तक बार-बार ग्वालियर पर कब्जे का प्रयास किया लेकिन जब सफलता नहीं मिली तो अपनी स्वतंत्रता और स्वाभिमान, अपनी आन, बान और शान की रक्षा के लिये मेवाड़ (चित्तौड़गढ़) चले गए। जहाँ मेवाड़ के महाराणा उदयसिंह ने उन्हें पूरा सम्मान दिया और उनके मुगलों के विरुद्ध लगातार 18 वर्ष के संघर्ष और उनकी वीरता देखते हुए उन्हें ''शाहों का शाह'' की उपाधि से सम्मानित किया तभी से उन्हें ''रामशाह तौमर'' कहा जाने लगा। महाराणा ने उन्हें ग्वालियर के राजा से सम्बोधित किया और अन्त तक इसी सम्मान का पात्र बनाए रखा। अपनी एक पुत्री अर्थात् राणा प्रताप की बहन की शादी रामशाह के बड़े पुत्र शालीवाहन से की। यह सारा घटनाक्रम विश्व प्रसिद्ध ऐतिहासिक दुर्ग चित्तौड़गढ़ का है।

भारत के इतिहास में राजस्थान का विशेष स्थान है और राजस्थान के इतिहास में मेवाड़ का अपना महत्त्व है। और मेवाड़ में ''हल्दीघाटी'' विश्व प्रसिद्ध युद्ध के लिये दुनिया में सुविख्यात है। इस युद्ध में एक ओर दिल्ली का बादशाह अकबर था और दूसरी ओर छोटी-सी रियासत का स्वामी प्रताप। यह एक ऐसा संग्राम था जिसमें हिन्दू-मुस्लिम का कोई प्रश्न नहीं था। एक ओर जहाँ प्रताप की सेना के बाएँ भाग का दलनायक हकीम खाँ सूर था और साथ ही कई मुस्लिक सैनिक थे तो दूसरी ओर अकबर का सेनापति एक हिन्दू था और सेना में सैंकड़ों राजपूत सैनिक थे। इस युद्ध में प्रताप की ओर से मेवाड़ के सिसोदिया वंश के राजपूतों के अतिरिक्त राठौड़, चौहान, पंवार, झाला, सौलंकी, डोडिया, देवड़ा, हाड़ा एवं भील मीणों के साथ ही ग्वालियर के राजा रामशाह तौमर के नेतृत्व में चंबल घाटी के सैंकड़ों तौमर, भदौरिया, सिकरवार और जादौन राजपूतों ने युद्ध में भाग लिया था।

आज देश की सर्वाधिक आकर्षक राजधानी दिल्ली की स्थापना महाभारत युद्ध के नायक अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु के वंशज तौमर राजपूतों ने ही की थी। चंबल क्षेत्र के तौमर राजपूतों ने सन् 736 ई. में ही अपना राज्य हरियाणा क्षेत्र में स्थापित किया था और सन् 1192 तक दिल्ली को राजधानी बनाकर राज्य करते रहे। तौमरों के दिल्ली राज्य का अंत होने के कोई दो शताब्दी बाद तौमरों ने ग्वालियर में अपने स्वाधीन राज्य की नींव डाली।

हमारे नायक वीरवर रामशाह तौमर के पिता विक्रमादित्य वीर एवं साहसी शासक थे जो इब्राहिम लोदी के पक्ष में बाबर के विरुद्ध लड़ते हुए शहीद हुए थे। बाद में हुमायूं काल में शरेशाह सूरी ने ग्वालियर पर अधिकार कर लिया। ग्वालियर लेने के लिये 18 वर्ष तक संघर्ष करने के बाद जब सफलता नहीं मिली तो रामशाह अपने परिवार और साथियों के साथ मेवाड़ चले गए। मेवाड़ में रहते हुए रामशाह ने अपनी वीरता और शौर्यता से अपना विशिष्ट स्थान बना लिया। 1567 में जब अकबर ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया तो उसमें रामशाह ने भी राणा की ओर से भाग लिया और मुगलों की घेराबंदी को कुशलतापूर्वक तोड़कर महाराणा उदयसिंह के पास पहुँच गए।

महाराणा उदयसिंह के दाह संस्कार के समय जगमाल की अनुपस्थिति से रामशाह एवं जालौर के मानसिंह अखेराजोत को संदेह हुआ तब इन दोनों ने

चूण्डावत सरदार कृष्णदास के सहयोग से प्रताप को गद्दी पर बिठाया। इस प्रकार रामशाह ने अपने वीरतापूर्ण एवं दृढ़ साहस के साथ न्याय का पक्ष लिया और अपने आपको मेवाड़ का सच्चा हितैषी सिद्ध किया। रामशाह के इस वीरोचित और न्यायोचित कदम ने प्रताप में वह जोश और उत्साह पैदा किया कि उन्होंने आजीवन मुगलों से टक्कर लेकर और स्वाधीनता की ज्योति को प्रज्वलित कर मेवाड़ और राजस्थान को विश्व प्रसिद्ध बना दिया।

वीरवर रामशाह महाराणा प्रताप के विश्वसनीय सहायकों में से एक थे। हल्दीघाटी के युद्ध में इन्होंने एवं इनके तीन पुत्रों और एक पौत्र एवं चंबल क्षेत्र के सैकड़ों राजपूतानों ने भाग लिया था। प्रताप की सेना के दक्षिणी पार्श्व का नेतृत्व रामशाह तौमर ने ही किया था। युद्ध के मैदान में इनका मुकाबला मुगलों के बाएँ पार्श्व के नेता गाजी खाँ बदख्शी से हुआ, भयंकर युद्ध शुरू हुआ और मुगलों की हरावल का बायाँ भाग मैदान से भाग खड़ा हुआ और राजपूतों के प्रबल पराक्रम के सामने गाजी खाँ बदख्शी रणक्षेत्र छोड़कर भागा। इस युद्ध के प्रत्यक्षदर्शी और अकबर की ओर से लड़ने वाले मुल्ला अब्दुल कादर बदायुनी ने रामशाह के इस समय के पराक्रम के विषय में लिखा है ''ग्वालियर के राजा मानसिंह के पोते राजा रामशाह ने, जो हमेशा राणा की हरावल में रहता था और युद्ध के दिन दक्षिणी (दाएँ) पार्श्व का नेता था ऐसी वीरता दिखलायी कि लेखनी की शक्ति के बाहर है। राणा प्रताप, राजा रामशाह और हाकीम खाँ सूर की मार से मुगल सेना भाग खड़ी हुई, इस प्रकार युद्ध का प्रथम अध्याय महाराणा की आंशिक विजय के साथ समाप्त हुआ। बाद में घाटी से हटता-हटता संग्राम का केन्द्र अब बनास के किनारे उस स्थल पर आ गया जो अब ''रक्तताल'' कहा जाता है। यहाँ अत्यन्त भयंकर युद्ध हुआ और रणक्षेत्र खून से लथपथ हो गया। इसीलिए इस स्थान का नाम युद्ध के बाद रक्तताल पड़ा। इसी रक्तताल में पिछले 50 वर्षों से हृदय में निरंतर प्रज्वलित अग्नि का अन्तिम प्रकाश पुंज दिखाकर अनेक शत्रुओं के उष्ण रक्त से रणक्षेत्र को रक्त-रंजित करते हुए मेवाड़ की स्वतंत्रता की रक्षा के निमित्त, प्रताप के स्वाभिमान और आन की खातिर धराशायी हुआ विक्रम सुत राजा रामशाह तौमर और अपने वीर पिता की बलिदानी परम्पराओं का पालन किया वीर पुत्रों ने और राजपूतों के बलिदान की धारा को आगे बढ़ाते हुए रामशाह के तीनों पुत्र शालिवाहन, भवानीसिंह एवं प्रतापसिंह और पौत्र बलभद्र यहीं बलिदान हुए और उनका साथ दिया चंबल क्षेत्र के सैंकड़ों राजपूतों ने जो युद्ध में भाग लेने यहाँ से गए थे। कैसा दिल दहला देने वाला क्षण रहा होगा जब पिता का बलिदान पुत्रों के सामने हुआ और भाई का बलिदान भाई के सामने हुआ। इस देश के लिये राजपूतों द्वारा किये बलिदानों की श्रृंखला में इस बलिदान की कोई मिसाल नहीं मिल सकती है। हल्दीघाटी में राजा रामशाह एवं उनके तीन पुत्रों एवं एक पौत्र का बलिदान अर्थात् एक ही दिन, एक ही स्थान पर, एक ही युद्ध में एक ही वंश व एक ही परिवार की 3 पीढ़ी एक दूसरे के सामने बलिदान हो गई। बलिदानों की श्रृंखला में इसे देश एवं मातृभूमि के लिये सर्वश्रेष्ठ बलिदान कहा जा सकता है।

प्रसिद्ध इतिहासकार बदायूनी के अनुसार युद्ध क्षेत्र में तौमर खानदान एवं युद्धरत चंबल क्षेत्र के राजपूतों में से एक भी वीर पुरुष जीवित नहीं बचा। राजा रामशाह के प्रमुख सहयोगी दाऊसिंह सिकरवार, बाबूसिंह भदोरिया की बहादुरी और बलिदान ने युद्ध की तथाकथित हार को भी जीत की संज्ञा दिला दी।

तौमर वंश के इतिहास पुरुषों से अनेक भूलें हुई थी कुछ कार्य जो किए जाने चाहिए थे उन्होंने नहीं किए, जो नहीं किए जाने चाहिए थे वे किए, इन सबका परिमार्जन राजा रामशाह तथा उनके 3 पुत्रों, 1 पौत्र और रण में उपस्थित समस्त तौमरों ने अपनी बलि देकर कर दिया। हल्दीघाटी के संग्राम का अन्तिम अध्याय अपनी आँखों से नहीं देखना चाहते थे। राजा रामशाह, उनके पुत्रों और चंबल क्षेत्र के राजपूतों ने अपने जीवित रहते

(शेष पृष्ठ 31 पर)

चरित्र-निर्माण में संस्कारों की समष्टि

– स्वामी श्री विवेकानन्द जी

हमारा प्रत्येक कार्य, प्रत्येक अङ्ग-संचालन, प्रत्येक विचार हमारे चित्त पर एक प्रकार का संस्कार छोड़ जाता है। यद्यपि ये संस्कार ऊपरी दृष्टि से स्पष्ट न हों, तथापि वे अवचेतनरूपी अंदर-ही-अंदर कार्य करने में पर्याप्त समर्थ होते हैं। हम प्रतिमुहूर्त जो कुछ होते हैं, वह संस्कारों के समुदाय द्वारा ही निर्धारित होता है। मैं इस मुहूर्त में जो कुछ हूँ, वह मेरे अतीत जीवन के समस्त संस्कारों का प्रभाव है। यथार्थत: इसे ही चरित्र कहते हैं। प्रत्येक मनुष्य का चरित्र इन संस्कारों की समष्टि द्वारा ही नियमित होता है। यदि भले संस्कारों का प्राबल्य रहे तो मनुष्य का चरित्र अच्छा होता है और यदि बुरे संस्कारों का प्राबल्य हो तो बुरा। एक मनुष्य निरंतर बुरे शब्द सुनता रहे, बुरे विचार सोचता रहे, बुरे कर्म करता रहे तो उसका मन भी बुरे संस्कारों से पूर्ण हो जाएगा और बिना उसके जाने ही वे संस्कार उसके समस्त विचारों तथा कार्यों पर अपना प्रभाव डालते रहेंगे और फिर वह एक बुरा आदमी बन जाएगा। इसी प्रकार कोई व्यक्ति अच्छे विचार रखे और सत्कार्य करे तो उसके इन संस्कारों का उस पर प्रभाव भी अच्छा होगा।

यदि तुम सचमुच किसी मनुष्य के चरित्र को जाँचना चाहते हो तो उसके बड़े कार्यों से उसकी जाँच मत करो, हर मूर्ख किसी विशेष अवसर पर बहादुर बन सकता है, मनुष्य के अत्यन्त साधारण चरित्र का पता लग सकता है। आकस्मिक अवसर छोटे-से-छोटे मनुष्य को भी किसी-न-किसी प्रकार का बड़प्पन दे देते हैं, परन्तु वास्तव में महान तो वही है, जिसका चरित्र सदैव और सब अवस्थाओं में महान् तथा सम रहता है।

मनुष्य की इच्छाशक्ति चरित्र से उत्पन्न होती है। हमारे चारों ओर जो कुछ हो रहा है, वह सब मन की अभिव्यक्ति है, मनुष्य की इच्छाशक्ति का प्रकाश है। कलपुर्जे, यन्त्र, नगर, जहाज, युद्धपोत आदि सभी मनुष्य की इच्छाशक्ति के विकासमात्र हैं। चरित्र कर्मों से गठित होता है। जैसा कर्म होता है, इच्छाशक्ति की अभिव्यक्ति भी वैसी ही होती है। संसार में प्रबल इच्छाशक्ति-सम्पन्न जितने महापुरुष हुए हैं, वे सभी महान् आत्मा वाले थे। उनकी इच्छाशक्ति ऐसी जबरदस्त थी कि वे संसार को भी उलट-पुलट सकते थे और यह शक्ति उन्हें युग-युगान्तर तक निरंतर कर्म करते रहने से प्राप्त हुई थी।

आश्चर्य की बात है कि कितने ही लोग सफलता प्राप्त करते हैं और कितने ही असफल हो जाते हैं। मूल बात तो यह है कि विशेष परिश्रम से ही चरित्र का गठन होता है। मन निर्मल, सत्त्वगुण युक्त और विवेकशील हो, इसके लिये निरंतर अभ्यास करने की आवश्यकता है। प्रत्येक कार्य से मानो चित्तरूपी सरोवर के ऊपर एक तरंग खेल जाती है। यह कम्पन कुछ समय बाद नष्ट हो जाता है, फिर क्या शेष रहता है-केवल संस्कार-समूह। मन में ऐसे बहुत से संस्कार पड़ने पर वे इकट्ठे होकर आदत के रूप में परिणत हो जाते हैं। ऐसा कहा जाता है कि आदत ही द्वितीय स्वभाव है। केवल द्वितीय स्वभाव ही नहीं, वरन् प्रथम स्वभाव भी है। हमारे मन में जो विचारधाराएँ बह जाती हैं, उनमें से प्रत्येक अपना एक चिह्न-संस्कार छोड़ जाती है। हमारा चरित्र इन सब संस्कारों की समष्टि रूप है। केवल सत्कार्य करते रहो, सर्वदा पवित्र चिंतन करो, इस प्रकार चरित्र-निर्माण ही बुरे संस्कारों को रोकने का एकमात्र उपाय है। अंग्रेजी में एक कहावत है, जिसका हिन्दी अनुवाद है-'यदि धन नष्ट होता है तो कुछ भी नष्ट नहीं होता, यदि स्वास्थ्य नष्ट होता है तो कुछ अवश्य नष्ट होता है, पर यदि चरित्र नष्ट होता है तो सब कुछ नष्ट हो जाता है।'

वास्तव में चरित्र ही जीवन की आधारशिला है, उसका मेरुदण्ड है। राष्ट्र की सम्पन्नता चरित्रवान् लोगों की ही देन है। जो राष्ट्र सम्पन्न हैं, प्रगति के रास्ते में धन से भी सम्पन्न होंगे। इसी प्रकार जहाँ के निवासी चारित्र्य से विभूषित होते हैं, वह राष्ट्र प्रगत होगा ही। राष्ट्रोत्थान और

व्यष्टि-चरित्र-ये दोनों अन्योन्याश्रित हैं। चरित्र की जड़ों को सुखाने वाला सबसे प्रबल तत्त्व है-स्वार्थ। स्वार्थ की भावना ही अहंता का मूल कारण है। जहाँ व्यक्ति केवल अपने लिये जीता है वहाँ किसी प्रकार के नैतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा नहीं हो पाती। नैतिक मूल्य रूपी जल के सिंचन से ही चरित्र का पौधा लहलहाता है। नैतिकता का सरल अर्थ है- ***'आत्मवत् सर्वभूतेषु'*** अपने ही समान सबको जानना। ऐसी वृत्ति को भारत में धर्म की वृत्ति कहा गया है। धर्म की सरल तथा सर्वग्राह्य व्याख्या करते हुए महर्षि वेदव्यास कहते हैं कि जो आचरण अपने प्रतिकूल हो वैसा दूसरे के प्रति कभी न करे, यही धर्म का सर्वस्व है -

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।।

जो स्वार्थपरायण हैं, वे नीतिविरुद्ध हैं और जो निःस्वार्थ हैं, वे नीतिसंगत हैं। चरित्रवान् व्यक्ति ही वास्तव में आनन्द का अधिकारी होता है और चरित्रवान् वह है, जिसने अपने स्वार्थ को अंकुश में रखा है। हमारी इन्द्रियाँ कहती हैं-अपने को आगे रखो, पर नीतिशास्त्र कहता है कि अपने को सबसे अन्त में रखो। इस प्रकार नीतिशास्त्र का संपूर्ण विधान त्याग पर ही आधारित है। उसकी पहली माँग है कि भौतिक स्तर पर अपने व्यक्तित्व का हनन करो, निर्माण नहीं।

उपयोगितावाद मनुष्य के नैतिक सम्बन्धों की व्याख्या नहीं करता; क्योंकि पहली बात तो यह है कि उपयोगिता के आधार पर हम किसी भी नैतिक अतीन्द्रिय गन्तव्य स्थल के प्रति संघर्ष का त्याग चाहते हैं; क्योंकि अतीन्द्रियता अव्यावहारिक है, निरर्थक है। पर साथ ही वे यह भी कहते हैं कि नैतिक नियमों का पालन करो, समाज का कल्याण करो। भलाई करने की बात तो गौण है, मुख्य है-एक आदर्श। नीतिशास्त्र स्वयं साध्य नहीं है, प्रत्युत साध्य को पाने का साधन है।

चरित्रहीनता ही राष्ट्र की मृत्यु का कारण थी। देश की मृत्यु का चिह्न अपवित्रता या चरित्रहीनता के भीतर से होकर आया है। यह चारित्र्य दोष किसी देश में प्रवेश कर जाता है तो समझना कि उसका विनाश निकट आ गया। बल ही जीवन है और दुर्बलता ही मृत्यु है। कापुरुष कभी चरित्रवान् नहीं हो सकता। सत्य तो वह है जो शक्ति दे, हृदय के अन्धकार को दूर करे और यह सत्य ही चरित्र-निर्माण का वास्तविक एवं स्थायी आधार है।

संस्कारों से ही चरित्र बनता है।

*

धन की चिंता

एक शहर में एक गरीब मोची और अमीर सेठ आमने-सामने रहते थे। मोची की टूटी-फूटी झोंपड़ी थी और सेठ का भव्य महल। मोची जूते-चप्पलें सिलकर अपना गुजारा चलाता था। उसे रोज ही गुजारे लायक पैसा मिल जाता था। वह चैन की बाँसुरी बजाता जीवन जी रहा था। सेठ की आमदनी इतनी थी कि वह चाहकर भी पूरा पैसा नहीं खर्च कर पाता था। उसे तरह-तरह की चिंताएँ रहती थीं। घर में धन-सम्पत्ति जमा रहने के कारण उसे रातभर उसकी सुरक्षा की चिंता के मारे नींद भी नहीं आती थी। सेठ मोची को देखकर ईर्ष्या करने लगा।

एक दिन एक उपाय सूझा। उसने मोची को बुलाया और उसे ढेर सारा पैसा देते हुए बोला-''मैं ये पैसा तुम्हें दान कर रहा हूँ। इसे लौटाने की जरूरत नहीं है।''

मोची धन पाकर बहुत खुश हुआ। उसने वह धन अपनी झोंपड़ी में रख लिया। रात हुई तो उसे भी धन की सुरक्षा की चिंता सताने लगी। इस चिंता में उसे नींद नहीं आई। धन की चिंता में उसकी हालत खराब हो गई। सुबह उठते ही वह सारा धन लेकर सेठ के पास पहुँचा और बोला-''सेठ जी, तुमने इस धन से ज्यादा मुझे चिंता दे दी है। ऐसा धन, जिससे चिंता मिले, मेरे किस काम का। इसे आप अपने खजाने में ही रखें तो ज्यादा बेहतर होगा।''

विचार-सरिता

(सप्तचत्वारिंशत् लहरी)

– *विचारक*

जन्मों-जन्मों से दु:ख और द्वैत से आदमी ने नाता जोड़ रखा है। संसार को दु:ख रूप, जीवन को दु:ख रूप मानने की भ्रान्ति ने भीतर में इतनी गहरी जड़ें जमा रखी हैं कि आदमी सुख को भ्रान्ति मान रहा है। काँटों से इतना लगाव हो गया है कि फूलों का होना असंभव मान रहा है।

हमारे स्वरूप में बंधन या द्वैत है ही नहीं। मुक्त होने में कोई बाधा ही नहीं क्योंकि मुक्त तो हम स्वरूपत: हैं ही। लेकिन बंधन की मान्यता ने जड़ें इतनी गहरी जमा रखी हैं कि मुक्ति की बात ही असंभव लग रही है। मुक्ति की बात सुहाती नहीं और बंधन की बात सुन-सुनकर राजी होना चाहता है। बंधन को ही होना मान रहा है। निर्बंधन का जो हमारा स्वभाव है उसे स्वीकृति ही देना नहीं चाहता। दु:खी और बंधे हुए लोगों की भीड़ में यदि कभी कभार कोई नित्यमुक्त बुद्ध या महावीर आ भी जाता है तो सारी भीड़ उसे पागल की संज्ञा देकर भगाने को राजी है।

कहते हैं भगवान बुद्ध जब अपने नगर में राजमहल में भिक्षु बनकर पहुँचे तो पिता ने कहा-'सिद्धार्थ मैं तुम्हें अब भी माफ कर सकता हूँ। मैं मानता हूँ कि तुमने बड़ी भूल की है। एक राजकुमार होते हुए यह भिक्षुक का बाना जो धारण किया है इसे अभी उतार फैंको और राजमहल के भोगों को अपनाओ, मैं पिता होने के नाते अपने पुत्र की सारी भूल को माफ कर सकता हूँ।' पिता की नजरों में वह अब भी सिद्धार्थ ही है। लेकिन बुद्ध ने कहा-'राजन आप अब जिस सिद्धार्थ को देख रहे हो उसमें वह नहीं है जो आप देख रहे हो। अब जो लौटकर आया है वह वह नहीं जो गया था। अभी जो लौटकर आया है, वह न तो आपका पुत्र है और न आप मेरे पिता हो।'

अपने स्वरूप में जगे हुए महापुरुषों को समाज के सोये हुए लोगों ने कभी स्वीकार ही नहीं किया। इसीलिए तो जीसस को क्रोस पर चढ़ा दिया गया। सुकरात को जहर पीना पड़ा। बुद्ध और कबीर को वैश्याओं के झूठे ताने सुनने पड़े। बंधन यही है कि हम अपने से अतिरिक्त मुक्ति खोज रहे हैं और मुक्ति यही है कि अपने को नित्यमुक्त जान लें। कोई नित्यमुक्त स्वरूप में जगा हुआ महापुरुष जब मुक्ति की बात सुनाता है तो सुने, ख्याल रहे कि दर्शक बनके न रह जाएँ अपितु हमें उसे भी देखते रहना है जो देख रहा है। सुनते समय केवल सुनाने वाले के चेहरे को ही नहीं देखना है। सुनते समय सुनाने वाले के शब्दों को सुनते हुए। उसे भी ख्याल में रखें जो सुन रहा है। यह दोहरा सुनना ही मुक्ति की परिभाषा पूर्ण करता है। एक ऐसी घड़ी आनी चाहिये कि उस समय दृश्य-दर्शक तथा वक्ता-श्रोता दोनों समाप्त हो जाएँ और केवल वहाँ द्रष्टा ही रहे। वही दृश्य, वही दर्शक तथा वही द्रष्टा बन जाए। उस द्रष्टा के अतिरिक्त दूसरा कुछ न रहे। यही पूर्ण जागृति है। यही पूर्ण मुक्ति है। बंधन तो यही है कि हम अपने को छोड़ दूसरे को ढूंढ रहे हैं। अपने आपका होश न होना अर्थात् अपने आपकी जानकारी न होनी तथा दूसरों की जानकारी इकट्ठी करना, यही तो बंधन है। हमारे भीतर की चेतना का नाम ही द्रष्टा है जो सदा मुक्तस्वरूप है।

कर्तापने का अभिमान ही बंधन है। चिदाभास सहित अंतकरण ही कर्ता है और अंतकरण सहित चिदाभास ही भोक्ता है। यह जानना तो यथार्थ जानना है पर अन्त:करण व चिदाभास का अधिष्ठान कूटस्थ आत्मा को ही यदि हमने कर्ता मान लिया तो बड़ी भारी भूल हो गई और उस कर्तापने के मिथ्या अभिमान के कारण मिथ्या भोक्ता बनकर जन्म-मरण का हेतु बन जाना कोई समझदारी का काम नहीं। बंधन स्वप्न जैसा है। आप बीकानेर में सोए और स्वप्न में बम्बई चले गए तो जागने

के बाद आप बम्बई में नहीं अपितु अपने आपको बीकानेर में ही पाओगे। बम्बई से बीकानेर आने के लिये किसी हवाईजहाज या हैलीकॉप्टर की जरूरत नहीं पड़ती। बस जाग जाना ही पर्याप्त है कि आपको लगेगा कि मैं कहीं गया ही नहीं। यह तो मात्र भ्रमजाल था। ऐसे ही अपने स्वरूप में बंधन की मान्यता है। निर्मूल मान्यता को अस्वीकृति ही बंधन से मुक्ति है।

वानर को पकड़ने वाले मदारी जंगल में किसी पगडंडी पर एक घड़ा गाड़ देते हैं, उसका मुँह ऊपर से खुला रखते हैं तथा भीतर कुछ भुने हुए चने डाल दिए जाते हैं। बंदर जब वहाँ आता है तो घड़े के भीतर चनों को देखकर दोनों हाथों की मुट्ठी में चनों को भर लेता है और चने सहित दोनों हाथ एक साथ निकालना चाहता है। पर जब वह हाथ बाहर नहीं निकाल पाता है तो वह सोचता है कि मेरे को किसी ने बाँध दिया है। वह खूब मशक्कत करता है पर हाथ बाहर नहीं आते। इतने में मदारी आकर गले में जंजीर डाल देता है। अब वह जीवनभर उठ बंदरी, बैठ बंदरी वाला पराधीनता का जीवन जीता हुआ जीवन लीला समाप्त कर लेता है।

ऐसे ही तोते को पकड़ने वाले जंगल में किसी वृक्ष पर कड़ाही में आधा पानी भरकर एक लोहे का तार जिस पर घूमने वाली नलनी पहनाई होती है वह कड़ाही के कड़ों पर रख दी जाती है। तोता पानी पीने के लिये आकर जब उस नलनी पर बैठता है तो उसमें आकाश के प्रतिम्बिब के कारण पानी गहरा प्रतीत होता है। ज्यों ही वह पानी पीने के लिये नीचे की ओर झुकता है तो वह तार पर लगाई गई नलनी घूम जाती है और वह उल्टा लटक जाता है। वह सोचता है कि इस नलनी को छोड़ दिया तो मैं गहरे पानी में डूब मरूंगा। वह टीं टीं करता है, इतने में बहेलिया आकर उसे पकड़ लेता है और पिंजरे में कैद कर लेता है।

बंदर और तोते की यह कहानी आदमी की कहानी है। आदमी भी विषयासक्ति के कारण विषयों में सुख ढूंढ़ता है और उसे दुःख और दरिद्रता ही हाथ लगती है। जीवनभर वह गुलामी जो कि एक प्रकार का बंधन है, उसी में जीवन लीला समाप्त कर देता है। जिस प्रकार वह वानर यदि चनों का मोह छोड़ दे तथा तोता उस नलनी को छोड़ दे तो वे तो सदा मुक्त ही हैं। उनको बाँधा किसी ने नहीं। वे खुद ही अपनी भूल से बंधे हुए महसूस कर रहे हैं। ऐसी ही स्थिति आदमी की है वह सदा स्वछन्द व मुक्त है। अपने का होश न होना ही बंधन है। अपने आप में बेहोशी छूट जाए और होश आ जाय, बस यही मुक्ति है। भीतर की चेतना ही यह दृश्य दिखा रही है। कान सुन रहे हैं।

हमारी मान्यता ही हमें भटका रही है। आपने देखा होगा कि सम्मोहन (हिप्नोटिज्म) करने वाला जब किसी पुरुष को सम्मोहित कर लेता है और उसे कहता है कि उठो तुम पुरुष नहीं स्त्री हो। तो वह जब चलेगा तो स्त्री की तरह चलेगा। उसे प्याज पकड़ा देता है और कहता है कि सेव खा लो, नाश्ता हो जाएगा। उसे पूछो कि सेव कैसी लगी? वह कहेगा–यह तो बिल्कुल कश्मीरी सेव है। बहुत स्वादिष्ट है। उसे प्याज की गंध भी नहीं आती। सम्मोहित व्यक्ति की मूर्छित अवस्था में उसके हाथ पर कंकर रखते हुए कह दो कि तुम्हारे हाथ पर अंगारा रख दिया है। यह सुनते ही वह व्यक्ति हाथ को तत्काल झटकेगा और हम पाते हैं कि उसकी हथेली पर फफोला हो गया है। उसकी भीतरी मान्यता ने ही उसे कंकर रूपी अंगारे ने जलाया। ऐसे ही हमारी भीतरी मान्यता ने ही अजन्मा आत्मा में जन्म और अमर आत्मा में मृत्यु की संसृति कराई है। इस रुग्ण मान्यता से छुटकारा कैसे मिले। कैसे भीतर में अमरत्व का नाद गूंजे और हम निर्भय होकर कह सकें कि मैं देह नहीं मैं देह का द्रष्टा नित्यमुक्त सदा स्वच्छन्द आत्मा हूँ।

यह सब तभी संभव है जब जैसे हमने अयथार्थ मान्यता को महत्त्व दिया और अकर्ता में कर्तापने का अभिमान होने लगा ऐसे ही यदि हम यथार्थ मान्यता को स्वीकृति दे देंगे कि यह देह तो मात्र एक चोला है जो बदलता रहता है। जीर्ण-शीर्ण होने पर उतार दिया जाता

है पर मैं इसके समस्त भाव, विकारों को जानने वाला घट-द्रष्टावत इससे न्यारा असंग आत्मा हूँ। इस यथार्थ मान्यता की दृढ़ता जब हो जाएगी उस समय यदि ब्रह्मा स्वयं आकर कहे कि अब तुम मृत्यु को प्राप्त होने वाले हो तो भी इस अयथार्थ बात की भीतर से कोई स्वीकृति नहीं मिलेगी और हम हमारे वास्तविक अमर आत्मा के आनंद में आनंदित रहेंगे। किसी प्रकार का खेद या भय हमारे स्वरूप के स्वभाव में है भी नहीं।

देखते हुए, सुनते हुए, चलते हुए भीतर में यह स्मरण रहे कि मैं न दृश्य हूँ, न दर्शक हूँ, मैं तो मात्र द्रष्टा हूँ। चलते समय भी स्मृति में रहे कि पैर चल रहे हैं मैं तो सदैव अचल हूँ। गाड़ी जब दौड़ती है तो उसका पहिया घूम रहा है पर उसके भीतर की कील (धुरी) स्थिर है। उस धुरी की स्थिरता के कारण ही पहिया घूम रहा है और गाड़ी चल रही है, ऐसे ही हमारी आत्मा तो वह धुरी है जो स्थिर है और उस स्थिरता के कारण ही पांवों में गति है और हमारा जीवन चलता हुआ प्रतीत हो रहा है। मुक्ति के लिये यह दृढ़तापूर्वक भीतर से स्वीकृति आ जाए कि मैं मुक्त हूँ। बस यही मुक्ति है। उसके लिये कोई उपाय या क्रिया की आवश्यकता नहीं। मुक्ति कृत्य का परिणाम नहीं, जानने का या ज्ञान का फल है। ऐसा यथार्थ जानना ही मुक्ति है। बद्ध का अभिमानी बद्ध और मुक्ति का अभिमानी मुक्त है। अत: जागो और अपने आत्मा के साक्षीभाव में रहो तथा अपने पूर्णत्व को निहारो। बद्धता हमारी मति में है स्वरूप में नहीं। स्वरूप से हम नित्य मुक्त हैं। बद्ध और दु:खी लोगों की भीड़ में रहने के कारण हमने भी अपने आपको नाहक बद्ध मान लिया। इसलिए इस भीड़ से हटकर एकांत में अपने आपको चौबीस घण्टे उसी भाव में रखो कि मैं बद्ध नहीं मुक्त हूँ। मुझे मुक्ति प्राप्त करनी नहीं अपितु मैं तो सदा मुक्त हूँ।

*

इंसाफ

एक राजा के पास एक गरीब बुढ़ा आदमी कोई दरख्वास्त लेकर पहुँचा। राजा ने उसे करीब बुलाया। वह अपनी छड़ी टिकाता राजा के पास पहुँचा और छड़ी के सहारे खड़ा होकर अपनी समस्या राजा को बताने लगा।

उस घबराए हुए बूढ़े ने इस बात पर ध्यान ही नहीं किया कि उसकी छड़ी का लोहे का नुकीला सिरा राजा के पाँव पर रखा है। उसके बोझ से छड़ी राजा के पाँव में धँस गई। राजा के चेहरे पर शिकन भी नहीं आई और उसने धैर्य से बूढ़े की पूरी बात सुनी, फिर उसकी दरख्वास्त पर उचित आदेश कर दिया। बूढ़ा खुश होकर राजा को दुआएँ देता लौट गया।

बूढ़े के जाते ही राजा दर्द से कराहता हुआ गिर पड़ा। अब सबकी नजर उसके पाँव पर पड़ गई और सारी बात समझ में आई। तुरन्त चिकित्सक को बुलाया गया।

एक दरबारी ने कहा-''महाराज, आपने उसकी छड़ी को पाँव से हटा क्यों न दिया?''

राजा ने कहा-''वह गरीब बूढ़ा वैसे ही परेशान था, अपनी बात कहने में इतना घबरा रहा था। अगर उसे पता चलता कि उसने मुझे घायल कर दिया है तो वह पूरी तरह डर जाता और मुझसे कुछ भी नहीं कह पाता। ऐसे में उसके साथ इंसाफ कैसे होता? यह सोचकर मैं चुपचाप दर्द सह गया ताकि बूढ़ा पूरी बात कह सके और मैं उसके साथ इंसाफ कर सकूँ।''

सत्य नकारा नहीं जा सकता

– मातुसिंह मानपुरा

लेखन कार्य का इतिहास बहुत पुराना है लेकिन समय एवं परिस्थितियों के झंझावातों से गुजरते हुए लेखन प्रक्रिया तथा दृष्टिकोण में अन्तर अवश्य आया है। चिन्हों के सहारे अपने भावों को प्रकट करता हुआ मानव आज वैज्ञानिक युग में प्रवेश कर चुका है। परन्तु तथ्यों को निष्पक्ष भाव से प्रस्तुत करना बहुत ही कष्टदायक कार्य है जो किसी साधक की साधना से कम नहीं है। न्यायाधीश का यह कार्य सही रूप से कुछ ही व्यक्ति कर पाते हैं। बाकी लोग अपने अन्तर की कुण्ठा को कागज पर उकेरने मात्र का कार्य करते हैं और पूर्व में ऐसा किया भी गया है। भारतीय इतिहास का प्रारम्भ से आज तक यदि हम समीक्षात्मक दृष्टि से अवलोकन करें तो देखेंगे कि वैदिक काल में असत्य लेखन की घुसपैठ नहीं चली और सत्य ने भी हिम्मत नहीं हारी। समय का चक्र घूमा और सब कुछ बदल गया। नीति और अनीति सभी साहित्य के अभिन्न अंग हो गए। सुकृत्यों की पहचान मिटाने के लिये चतुर्दिश प्रहार होने लगे। आखिर क्यों? उत्तर सुस्पष्ट है, बागवान सचेष्ट नहीं होगा तो उसके पेड़ों पर लगे आम के फूलों को तथाकथित समीक्षक नींबू ही बतायेंगे। ऐसा ही हुआ-क्षत्रिय जाति के गौरवपूर्ण इतिहास के साथ।

चारों युगों में जिनके सुकार्यों का डंका बजता रहा; यथा-सत्ययुग में निशाचर शक्तियों से संघर्ष व विष का नाश कर अमृत को श्रेष्ठ सिद्ध किया; त्रेता में भगवान राम ने लोकसंग्रह कर बन्दर-भालुओं को साथ ले, राक्षसों का संहार कर, मर्यादा पुरुषोत्तम राम कहलाए; कृष्णावतार ले द्वापर में गोधन की सेवा कर शाश्वत तथ्य को प्रस्तुत किया एवं चातुर्य नीति से मर्यादाहीन लोगों का भार पृथ्वी से हटाया; कलियुग में तलवार के सहारे नीर-क्षीर को पृथक कर सुशासन व्यवस्था देकर 'स्वर्ण युग' जैसे कीर्तिमान उपनाम प्राप्त किए तथा सिर हथेली पर रखकर ब्रह्मा, विष्णु, महेश का कार्य किया। हर युग के हर पल-क्षण में क्षात्रशक्ति को संघर्षरत रहना पड़ा। वैदिकाल और तदुपरान्त के कुछ समय को विद्वान पुरुषों का विषय मानकर छोड़ दें।

भारतीय इतिहास के प्रशासन द्वारा प्रमाणित मध्यकाल को यदि थोड़ा रुककर गौर से देखें तो पायेंगे कि उस समय दो प्रकार का इतिहास लिखा जा रहा था। एक तलवार-भालों से तथा दूसरा कपटपूर्ण लेखनी से। सत्य लेखन का दीपक भी यत्र-तत्र अपनी क्षमतानुसार प्रज्वलित था। सृष्टि की व्यवस्था करने वाली कौम ने पशु-पक्षियों व शरणागत की रक्षा के लिये अपने सिर को सहर्ष त्यागना व जौहर की ज्वाला में स्नान करने की अपनी मर्यादा को अक्षुण्ण बनाये रखा। दूसरी तरफ विदेशी आक्रान्ताओं ने आर्य भूभाग पर आक्रमण कर तवारिखों में असत्य लेखन कार्य किया। मंदिरों की जगह मस्जिदें बनी व गौरवपूर्ण कार्यों की अनदेखी कर अपने ही पक्ष का साहित्य लिखा। याचना कर दासी पुत्रियों को प्राप्त कर राजकुमारी लिखा गया। शोधकर्ता डॉ. भानावत ने यह प्रमाणित कर दिया है। विदेशी लेखकों ने अपने इस असत्य, अप्रमाणित साहित्य में जो लिख सके, लिखा। लेकिन क्षत्रिय जाति बेखबर थी इस प्रकार के दुष्प्रचार से और कटिबद्ध थी-'परित्राणाय साधूनाम् विनाशाय च दुष्कृताम' में।

इसके बाद भी एक अन्य गोरी चमड़ी वाली जाति भी भारत देश पर राज्य करने में सफल रही। इस जाति ने विलासिता का जाम पिलाकर क्षत्रियों को अपने समकक्ष बनाने का प्रयास किया तथा आर्यों को विदेशी बताकर अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने का कार्य प्रारम्भ किया तथा अपने राज्य करने के अधिकार की पुष्टि की। क्षत्रिय जो राजपुत्र, रजपुत्र कहलाने के बाद राजपूत नाम से सुविख्यात हुए, अपने इस पतन के दौर में संभल नहीं सके।

साहित्य का यह असत्य लेखन स्वतंत्र भारत के इन इतिहासकारों ने, अन्य प्रमाणित इतिहास न मिलने के कारण स्वीकार कर रखा है लेकिन वह दिन दूर नहीं जब भारतीय इतिहासकार सत्य को खोजने में सफल होंगे। क्योंकि सत्य शाश्वत है, उसे छुपाया या नकारा नहीं जा सकता। विदेशी इतिहासकारों द्वारा आर्यों को विदेशी बताने के षड़यंत्र का भंडाफोड़ अब शोध लेखों में कर दिया गया है, अब समय निकट है जब गौरवपूर्ण इतिहास के धूमिल पृष्ठ स्वर्णाक्षरों में आलोकित होंगे।

अति सर्वत्र वर्जनीय

– भँवरसिंह रेड़ी

अति सब जगह वर्जनीय है। जीवन के हर क्षेत्र में संयम व संतुलन बनाये रखना परम आवश्यक है। हमें सदैव स्मरण रखना चाहिए कि हम अकेले नहीं हैं, हम समाज में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। समाज में व्यवहारिकता निभानी आवश्यक है। इसके लिये जीवन में हर क्षेत्र में संयम रखना आवश्यक होगा। सीमा में रहना होगा। अति से परे रहना होगा। इसके लिये सबसे प्रथम आवश्यकता है–

खान–पान में अति न करना :– खान–पान से आशय है कि अत्यधिक खाकर हम पेट ही खराब न कर बैठें। पेट की गड़बड़ का सीधा असर मन पर पड़ता है। जैसे किसी को अजीर्ण और अपच गैस की शिकायत है तो वह कभी न कभी उत्तेजित, कटुभाषी, विद्रोही व प्रदूषण बढाने वाला बन सकता है। अत: खान पान का सीधा प्रभाव मन पर पड़ता है। भोजन से रक्त–मज्जा आदि बनते हैं। शरीर में सार भूत प्राण तत्व है। शुद्ध व संयमित व प्राकृतिक व सात्विक भोजन से प्राण शुद्ध रहता है। अशुद्ध, अप्राकृतिक व तामसिक भोजन से मन व इन्द्रियों में चंचलता व विकृति आ जाएगी। अत: पेट की खराबी से बचने के लिये व शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिये भोजन सम्बन्धी संयम बनाये रखने के लिये इन बिन्दुओं पर ध्यान देना आवश्यक है :–

1. गरिष्ठ भोजन करने में संयम बरतें।
2. यदा–कदा यथाशक्ति उपवास रखें।
3. जिह्वा स्वाद के लिये अति मसालेदार, तरीदार, साग, तरकारियों से बचें।
3. शत्रुता व ईर्ष्या के भाव पाचन तंत्र पर कुप्रभाव डालते हैं, अत: शान्त मन से भोजन करें।
5. क्रोध, भय, चिन्ता, विषाद के भावों में भोजन करने से बचते रहें।

वाणी का संयम :– वाणी में वह ताकत है जो आग भी लगा सकती है और आग बुझा भी सकती है। आग लगायें ही नहीं इसी में समझदारी है। क्या पता आग लगाकर हम बुझाने जावें, पीछे से सब कुछ स्वाहा हो जाय। दुनिया के आधे झगड़े–फसाद जुबान से ही होते हैं। आदमी दूसरों की कमियाँ निकालना, आलोचना करना व दूसरों की नुक्ता चीनी करना तो बहुत जानता है लकिन प्रेम की वर्षा करना, अपनी गलती स्वीकार करना, किसी को सम्मान देकर सम्मान पाने की बात नहीं जानता।

एक बार अधिक बोलने वाला एक व्यक्ति सुकरात के पास आया और बोला कि आपसे भाषण देने की कला सीखने आया हूँ। महात्मा ने कहा–पहले तुम्हें कम बोलना सीखना होगा और फिर न बोलना सीखना होगा। अन्यथा भाषण बकवास बनकर रह जाएगा। आज का मानव इतना बातूनी हो गया है कि उसको चाहे वह ट्रेन में हो, प्लेन में हो, प्रात: भ्रमण में हो, चाहे शादी, पार्टी या किसी समारोह में हो, उससे बात करने वाला चाहिए। उसकी बात सुनने वाला चाहिए। यही नहीं कई व्यक्ति तो कोई दूसरा न हो तो अपने आप से भी बात करने, बड़–बड़ाने लग जाते हैं।

बोलने में अत्यधिक शारीरिक शक्ति व्यय होती है। शरीर की सभी रगों पर जोर पड़ता है। रोगी को डाक्टर कम बोलने की सलाह इसीलिए देते हैं। कमजोर आदमी ज्यादा देर बोल ही नहीं सकता। रोगी कुछ ही देर में या तो हाँफने लग जाता है या पसीने से तरबतर हो जाता है। अत: बोलने का संयम सभी प्रकार से श्रेष्ठ है तथा बोलने में अति करना सब प्रकार से हानिकारक है।

अतिव्यय नहीं, मितव्यता बरतें :– मारवाड़ी भाषा में एक पुरानी कहावत है कि 'कर्जो भलो न बाप को, बेटी भली न एक। पेन्डो भलो (पैदल चलना) न कोस को, साहिब राखे टेक।।' उपरोक्त दोहे में और बातों में सार्थकता है या नहीं लेकिन कर्ज वाली बात यथार्थ में सही बैठती है। जो व्यक्ति सुख भोग व स्वार्थ के लिये कर्ज लेता है वह अपने सिर पर शिला रखकर पैरों का भार बढाता है

और जो अति आवश्यकता वश, रुग्णता वश या व्यापार हेतु कर्ज करता है वह नैतिक पतन नहीं करता वह विवशता होती है। प्रदर्शन करने के लिये, सामाजिक प्रतिष्ठा के लिये या भौतिक सुख-सुविधा के लिये जो कर्ज करता है वह सदैव दुखदाई होता है। अत: ''तेते पाँव पसारिये, जैती लाम्बी सोड़।''

कर्ज से हानियाँ :-

* मानसिक उतार-चढ़ाव में वृद्धि।
* मान हानि के प्रसंग।
* भय तथा विभिन्न प्रकार के दबाव।
* मानसिक चिंतन या दबाव से अनिद्रा।
* झूठ बोलने के प्रसंग।
* शारीरिक व मानसिक क्षय।
* सामाजिक प्रतिष्ठा का पतन।
* एक दिन दिवालिएपन की स्थिति सम्भव।

अत्यधिक सोना भी हानिकारक :- अधिक नींद रोग को निमन्त्रित करती है, मोटापा बढाती है तथा आलस पैदा करती है। कार्यक्षमता घटाती है। जिद्दीपने की आदत पनपाती है। नींद और भूख दोनों शरीर की प्राकृतिक माँग हैं। अत: इनका प्रकृति अनुसार संतुलन बनाये रखना ही हितकर है। आज इस भागा-दौड़ी के युग में मानव नींद, भूख और भाषा और व्यवहार के प्रति जितना लापरवाह है उतना और किसी के प्रति लापरवाह नहीं है। समय पर खाना-पीना और समय पर उठना-बैठना आज के युग के मानव के लिये तपस्या के समान हो गया है। अत: आवश्यकता से अधिक नींद लेना भी हानिकारक है। विभिन्न प्रकार की बीमारियों को आमन्त्रित करता है, तामसिक वृतिकारक है।

आमदनी की अति भी भली नहीं है :- व्यक्ति को अर्थोपार्जन आवश्यक है, किसके लिये? पेट भरने के लिये, अच्छी शिक्षा के लिये, अच्छे खान-पान, पहिनावे के लिये, अच्छे आवास तथा सामाजिक प्रतिष्ठा व सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये, लेकिन इन सबकी पूर्ति होने के बाद भी मन भरता नहीं है। इसलिए वह दौड़ता रहता है।

होड़ और दौड़ से कमाया धन चिन्ता बढाये बिना नहीं रह सकता। वास्तविक शान्ति अधिक धन कमाने में नहीं है बल्कि वास्तविक शान्ति संतोष में है। रुपया, पैसा, धन-दौलत स्थिर रहने वाली वस्तु नहीं है ये तो आने-जाने वाली वस्तु है, चले भी जायें तो क्या है? लेकिन शान्ति चली जाएगी तो फिर क्या करेंगे?

अति चिंतन भी बुरा है :- मनुष्य का स्वभाव है कि वह बिना सोचे, बिना खाये-पीये या बोले कुछ समय रह सकता है लेकिन बिना चिंतन के या बिना विचार के एक पल भी रहना मुश्किल है। विचार एक मस्तिष्कीय चिंतन है जो व्यक्त-अव्यक्त चलता रहता है। वास्तव में विचार कोई बुरा नहीं होता उसके प्रेरक ही अच्छे बुरे होते हैं। विचार हमारे मन के तल की अभिव्यक्ति होती है तल की जैसी रचना होगी वैसे ही हमारे विचार होंगे। यदि मन में गन्दगी है, राग, द्वेष, ईर्ष्या के भाव हैं तो विचार अधिक भी आएंगे तथा मन को भारी करने वाले भी होंगे। आध्यात्मिक चिंतन या विचार मन को सुख देने वाले होते हैं। हिंसात्मक विचार मस्तिष्क को खराब कर देते हैं। जिस चिंतन या विचार से भय, निराशा, उत्तेजना व आक्रमण के भाव पैदा हों, वैसा चिंतन मस्तिष्क में प्रवेश न होने पाये इसका ध्यान रखते रहना चाहिए। मन की पवित्रता के लिये अन्तर की शुद्धि चाहिए व अति चिंतन व अति मनन से परहेज रखना चाहिए।

उपसंहार :- उपरोक्त सभी बिन्दू व्यक्ति के व्यवहारिक जीवन को प्रभावित करते हैं। व्यक्ति का आचरण व चरित्र उसके व्यवहारिक जीवन पर ही निर्भर है। पुस्तकीय ज्ञान से अधिक महत्त्व चरित्र और आचरण का है। चरित्र व आचरण व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में संयम संतुलन पर निर्भर हैं। ज्ञान स्वयं तक सीमित है जबकि चरित्र समाज व संसार दोनों से जुड़ा हुआ होता है। आप व हम क्या जानते हैं? और क्या करते हैं? इन दोनों में बहुत बड़ी भेद रेखा है। कम ज्ञान वाला व्यक्ति अच्छा जीवन जी लेता है तथा महात्मा के उच्च पद पर पहुँच जाता है परन्तु हीन चरित्र वाला व्यक्ति मानव जीवन के

किसी भी नैतिक पद पर नहीं पहुँच सकता। एक समय था जब आदमी इज्जत, प्रतिष्ठा और चरित्र की चिन्ता करता था लेकिन आज उसे इतना महत्त्व नहीं देता जितना अर्थ को देता है। और आज के युग में जो हर क्षेत्र में भ्रष्टाचार, हत्या, व्यसन, चोरी-डकैती, लूटपाट, धोखाधड़ी आदि सब प्रकार के अपराध होते हैं वे सब धन के लिये ही होते हैं। राजनैतिक क्षेत्र में जितना भी भ्रष्टाचार है, वह सब धन के लिये है। राजनेता प्रजा की सेवा के नाम पर राजनीति के क्षेत्र में प्रवेश करते हैं और बाद में क्या कुछ होता है वह हम सब के सामने है। मनुष्य, जो संसार में ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति है, उसके आचरण पर इसीलिए प्रश्न चिह्न लगता जा रहा है कि वह किसी भी क्षेत्र में संयम नहीं बरत रहा है। सबमें अति कर रहा है और स्वयं दुखी होता चला जा रहा है तथा समाज व संसार को भी व्यथित करता चला जा रहा है। क्योंकि रात को देर तक घर से बाहर रहता है तथा देर से आकर सोता है तो प्रात: देर से ही उठता है। समयबद्धता, नियमितता समाप्त होती चली जाती है। होटल और बोटल का उपयोग ज्यादा से ज्यादा करने की संस्कृति चल पड़ी है जो समाज को खोखला ही नहीं बल्कि जर-जर अवस्था में ले जा रही है। सिनेमा व टी.वी. पर अश्लील दृश्य की फिल्में देखने का शौक भी तो जवान पीढी में बढता जा रहा है। कौन से चैनल पर कौनसी नंगे दृश्यों की फिल्म आएगी, इसकी चर्चा ज्यादा करना पसन्द करेंगे न कि विष्णु पुराण, रामायण या महाभारत की।

आय से अधिक व्यय करना शौक बनता जा रहा है। प्रदर्शन व प्रति स्पर्धा में धन पानी की तरह बहाया जा रहा है। अनावश्यक व तामसिक मँहगे खान-पान में अपव्यय किया जा रहा है। स्वार्थ की मनोवृत्ति बढती जा रही है। कथनी व करनी में कहीं मेल नहीं बैठ रहा है।

स्टेज पर समाज सुधार के लम्बे चौड़े भाषण देने वाले, टीका, दहेज आदि सामाजिक बुराइयों को समाप्त करने का उपदेश देने वाले, स्वयं ही उन बुराइयों को प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष बढावा देते चले जा रहे हैं।

मित्तव्यय का पाठ पढाने वाले ही शादी समारोहों में फिजूल खर्ची करके वाहवाही लूटना चाहते हैं। ऐसे में आवश्यकता है वैचारिक क्रान्ति की, आवश्यकता है स्वयं से सुधार करने की, आवश्यकता है कथनी व करनी में भेद पाटने की। आवश्यकता है भावी पीढ़ी के निर्माण की।

सत्य

घटना उस समय की है जब भगवान बुद्ध ने अपना प्रथम उपदेश दिया था। उस समय जो गीता को मानते थे, उन्होंने विरोध किया। जो वेद को मानते थे, उन्होंने विरोध किया। बुद्ध दुश्मन की तरह मालूम पड़ने लगे सभी को, फिर धीरे-धीरे बुद्ध के वचनों पर भी धूल जम गई, लेकिन उनके घनिष्ठ शिष्य धम्मपद ने वह धूल इकट्ठी कर ली। जब धम्मपद पर धूल की परत इकट्ठी हो गई, तब बुद्ध ने कहा-''यह धूल और वास्तविक धूल तो सब एक जैसी हैं उसके नीचे क्या दबा है, क्या फर्क पड़ता है?''

''सत्य तो कृष्ण और मोहम्मद में है, सत्य हमेशा कड़वा लगता है। उसका पहला स्वागत विरोध से होता है, पत्थरों से, गालियों से। बहुत सूलियाँ चढ़नी पड़ती हैं सत्य को। तब कहीं वह स्वीकार होता है, लेकिन वे सूलियाँ चढ़ने में ही समय बीत जाता है। तब तक सत्य पर बहुत धूल जम जाती है, तभी तुम स्वीकार करते हो। क्योंकि तब सत्य तुम्हारे शास्त्र जैसा होने लगता है। सत्य जितना नया होता है उतना सत्य होता है, क्योंकि उतना ही ताजा-ताजा परमात्मा से आया होता है। जैसे गंगा गंगोत्री में जैसी स्वच्छ है, वैसी काशी में थोड़े ही होगी। अत: सत्य ही धर्म है। उसे अपनाओ, स्वीकार करो।''

अपनी बात

संसार में भलाई है तो बुराई भी है। जीवन में एक अनिवार्य संतुलन है। जितनी यहाँ बुराई है, उतनी ही यहाँ भलाई है। जितना यहाँ अन्धेरा है, उतना ही यहाँ प्रकाश है। जितना यहाँ जीवन है, उतनी ही यहाँ मृत्यु है। वे संसार की गाड़ी के दो चाक हैं। संसार चल रहा है, चलता रहा है, चलता रहेगा क्योंकि दोनों चाक हैं। परन्तु साधारणत: हमें यही दिखाई पड़ता है कि यह पृथ्वी असुरों से तो भरी पड़ी है, देव कहाँ हैं?

हमें वही दिखाई पड़ता है, जो हम हैं। पृथ्वी असुरों से भरी दिखाई पड़ती है, वह हमारी अपनी आसुरी वृत्ति का दर्शन है। देव को तो हम पहचान ही नहीं सकते। वह दिखाई भी पड़े, मौजूद भी हो, तो भी हम उसे पहचान नहीं सकते। क्योंकि जब तक दिव्यता की थोड़ी झलक हमारे भीतर न जगी हो, तब तक दूसरे के भीतर जागे हुए देव से हमारा कोई सम्बन्ध निर्मित नहीं होता।

जो हमें दिखाई पड़ता है, वह हमारी ही आँखों का फैलाव है, वह हमारी दृष्टि का ही फैलाव है। हमें वह नहीं दिखाई पड़ता जो है, बल्कि वही दिखाई पड़ता है जो हम हैं।

दैवी सम्पदा से भरे व्यक्ति को इस जगत में असुर कम और देवता ज्यादा दिखाई पड़ने लगते हैं। संत को बुरा आदमी दिखाई पड़ना बंद हो जाता है। हमें जो बुरा दिखाई पड़ता है, संत को वही अच्छा दिखाई देता है। उसकी व्याख्या बदल जाती है। हमने किसी की व्याख्या बनाई उसी व्याख्या का रूप बदलकर संत-व्याख्या बन जाती है।

संत को दिखाई पड़ने लगता है, सभी भले हैं। असंत को दिखाई पड़ता है, सभी बुरे हैं। दोनों ही बातें अधूरी हैं। जब कोई परिपूर्ण साक्षी-भाव को उपलब्ध होता है जहाँ न तो वह साधुता से जुड़ता है और न असाधुता से, जहाँ वह बुरे और भले दोनों से पृथक है, तब उसे दिखाई पड़ता है कि जगत में दोनों बराबर हैं। और बराबर हुए बिना जगत चल नहीं सकता।

यदि हमें दिखाई पड़ता है कि पृथ्वी असुरों से भरी है, तो इसका केवल एक ही अर्थ है कि हम आसुरी सम्पदा में जी रहे हैं। पृथ्वी से इसका कोई सम्बन्ध नहीं। जो हमारे भीतर है, उसके माध्यम से ही हम दूसरे को देखते हैं। दूसरे की वास्तविक स्थिति हमें दिखाई नहीं पड़ती, हमारा ही मन उस पर छा जाता है, हमारी छाया ही उसे आच्छादित कर लेती है। दूसरा व्यक्ति जैसे परदा बन जाता है, हमारा ही चित्त उस परदे पर दिखाई देता है। दूसरा जैसे दर्पण है।

यदि कभी-कभी हमें कोई एकाध देव भी दिखाई पड़ जाता है, तो उसका अर्थ है कि हमारे भीतर की दैवी संपदा थोड़ी-बहुत सक्रिय है। वह बिल्कुल मर नहीं गई है, जीवन्त है। उसकी भी कोई एक किरण इस अंधेरे में मौजूद है, इसलिए हम कभी-कभी उसकी झलक दूसरे में देख लेते हैं। जैसे-जैसे हम दैवी संपदा में लीन होंगे, वैसे-वैसे जगत हमको दिव्य मालूम पड़ने लगेगा।

योग की जो परम दशा है, वह दोनों ही भावनाओं से मुक्त हो जाना है। जिस दिन जगत उसकी वस्तुस्थिति में दिखाई पड़े, जिस दिन भीतर से कोई भाव जगत पर न फैले, उस दिन अनूठा अनुभव होता है कि जगत में सभी चीजें संतुलित हैं। यहाँ बुरा और भला बराबर है। यहाँ पापी और पुण्यात्मा बराबर हैं। यहाँ ज्ञानी और अज्ञानी बराबर हैं। उनकी मात्रा सदा ही बराबर है। यह संतुलन बना रहता है। संतुलन की अवस्था जिसके अनुभव में आ गई वह जगत को न बुरा कहेगा, न भला। बुरा और भला जैसे एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

जीवन में तीन दिशाएँ हैं। एक दिशा है कि अपने भीतर जो आसुरी संपदा है, उसको हम अपना स्वभाव समझ लें, तो फिर हमारा जगत बुरा है। दूसरी संभावना है कि हमारे भीतर जो दैवी संपदा, हम उसके साथ अपने को एक समझ लें, तो सारा संसार भला है। तीसरी परम संभावना है कि हम इन दोनों गुणों से, इस द्वैत से अपने

को मुक्त कर लें और साक्षी हो जाएँ। तो फिर जगत बुरे और भले का संयोग है, रात और दिन का जोड़ है, अंधेरे और प्रकाश का मेल है, ठण्डे और गरम का संतुलन है। जिस दिन इस तरह चुनाव रहित, विकल्प रहित भीतर दोनों संपदाओं में से किसी को भी न चुने, उसी दिन मुक्ति है।

हम तीन शब्द जानते हैं। एक शब्द नरक है। नरक का अर्थ है, जिसने अपने को आसुरी संपदा से एक कर लिया है। दूसरा शब्द स्वर्ग है। स्वर्ग का अर्थ है, जिसने अपने को दैवी संपदा से एक कर लिया है। और तीसरा शब्द मोक्ष है। मोक्ष का अर्थ है, जिसने अपने को दोनों संपदाओं से मुक्त कर लिया है।

देव भी मुक्त नहीं है, वह भी बंधा है। उसके बंधन प्रीतिकर हैं। उसकी जंजीरें सोने की हैं। उसका कारागृह बहुमूल्य है, बहुत सजा हुआ है। उसका जीवन आभूषणों से लदा है। लेकिन लदा है, वह निर्भार नहीं है। बुरा आदमी लोहे की जंजीरों से बंधा है, अच्छा आदमी सोने की जंजीरों से बंधा है। लेकिन बंधन में जरा भी कमी नहीं है।

दुनिया के किसी दूसरे धर्म में मोक्ष की कल्पना नहीं है। स्वर्ग और नरक सारी दुनिया को पता है लेकिन मोक्ष की धारणा एकान्तिक रूप से भारतीय है। मोक्ष का अर्थ है, ऐसा व्यक्ति जो नरक से तो मुक्त हुआ ही, स्वर्ग से भी मुक्त है। जिसने बुरे को तो छोड़ा ही, भले को भी छोड़ा। हमें लगता है भले को तो छोड़ने का प्रश्न ही नहीं। पर हम जीवन की गहरी व्यवस्था का अनुभव कर पाएँ तो भले के पीछे बुरा तो छिपा ही रहेगा। दुख के कारण ही सुख का पता चलता है, बुरे के कारण ही भले का पता चलता है, बीमारी के कारण ही स्वास्थ्य का पता चलता है। दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

दैवी संपदा और आसुरी संपदा, दोनों को लिये हुए ही संघ में सब आएँगे। कर्त्तव्य-कर्म डगर पर निरंतर बढते रहकर इन दोनों ही संपदाओं से ऊपर उठने का अनुष्ठान चलता रहे। यही कर्तव्य कर्म है।

पृष्ठ 20 का शेष

हल्दीघाटी का विस्मृत, बलिदानी रामशाह तोमर

मुगलों को आगे नहीं बढ़ने दिया। उनकी पूर्णाहुति के प्रति कवि खड़गराय ने अपनी श्रृद्धांजलि के रूप में कुछ पंक्तियाँ अर्पित की है -

झाला झुकि नहीं, लारो हारि हाड़ा मुख मोर्या
भदौरिया, सिकरवार, पंवार हरिं कंर, वर का जोर्यो,
बाबर बर मेवाड़ मेरू चने चक दिया
चलि चंदेल चौहान, मंदया नंचन किया
दो दल चल्लो, दलपति चल्युऊ इक चलो न विक्रम शाह सुत
दे प्राण प्रन्याऊ रान धन सुरभि अरला रण में रहुब

दोनों दल विचलित हुए, बड़े-बड़े दलपति भी विचलित हुए। केवल एक विक्रम का पुत्र ही रण में अविचलित रहा, राणा रूधी धन की रक्षा में अपने प्राणों को पनिहाई के रूप में देकर ''राम'' रण में अटल रहा।

हल्दीघाटी के युद्ध में रामशाह उनके तीन पुत्र और एक पौत्र बलभद्र युद्ध की भूमि में शहीद हुए थे, शालिवाहन के दो पुत्र श्यामसिंह और मित्रसेन जीवित बचे थे। एक महान बलिदानी और स्वतंत्रता सेनानी की इतिहासकारों, चारणों एवं भाटों ने वह प्रशस्ति और महत्व नहीं दिया जो दिया जाना चाहिए था। रामशाह का सारा जीवन संघर्षमय रहा, बचपन में ही पिता का साया उठ गया, फिर भी इन्होंने अपनी युवावस्था से ही अपनी रियासत ग्वालियर के लिये बराबर संघर्ष किया और जिस प्रकार राणा प्रताप चित्तौड़ को विजित करने की आस मन में लिये स्वर्ग सिधार गए, राजा रामशाह भी ग्वालियर की आस मन में लिये सैंकड़ों मील दूर सारा जीवन स्वतंत्रता, स्वाभिमान, आन-बान और शान, मान-मर्यादा के साथ संघर्षरत रहकर अपनी अमर कीर्ति छोड़कर उस दिव्य ज्योति में विलीन हो गए। उन्होंने अपना राजपूती धर्म निभाया किन्तु इतिहास व समाज उनके प्रति कृतघ्न रहे कि उन्हें वह कीर्ति और ख्याति नहीं दे सके जो दी जानी चाहिए थी।

✲

- : शिविर सूचना :-

यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष है कि श्री क्षत्रिय युवक संघ के आगामी प्रशिक्षण शिविर निम्न प्रकार से होने जा रहे हैं-

क्र.सं.	शिविर	समय	स्थान	मार्ग आदि
01	तीन दिवसीय	07.09.2019 से 09.09.2019	**राजकोट**	हरभमजी राजपूत बोर्डिंग हाउस।
02	तीन दिवसीय	07.09.2019 से 09.09.2019	**धंधूका**	राजपूत बोर्डिंग हाउस।
03	चार दिवसीय	07.09.2019 से 10.09.2019	**बरांगणा**	डीडवाना के पास आकोदा रूट पर।
04	चार दिवसीय	07.09.2019 से 10.09.2019	**हरियाली ग्राम**	सांचोर से भीनमाल मार्ग पर, बस सेवा उपलब्ध।
05	चार दिवसीय	07.09.2019 से 10.09.2019	**भाद्राजून** (जालौर)	धुम्बड़ा माताजी मंदिर, रामा-कोराणा मार्ग पर, भाद्राजून व रामा से टैक्सी सेवा।
06	चार दिवसीय	07.09.2019 से 10.09.2019	**आऊ**	फलौदी-नागौर मार्ग पर।
07	चार दिवसीय	07.09.2019 से 10.09.2019	**सोढांकोर**	रा.उ.मा.वि. सोढांकोर, जैसलमेर-पोकरण मार्ग पर।
08	चार दिवसीय	07.09.2019 से 10.09.2019	**बाड़मेर**	आलोक आश्रम (बाड़मेर) बाड़मेर-गेहूं रोड़ पर।
09	चार दिवसीय	07.09.2019 से 10.09.2019	**बेलासर**	नापासर-गुसांईसर मार्ग पर रूपनाथ महाराज का मंदिर, बीकानेर से 11 बजे बस है।
10	चार दिवसीय	07.09.2019 से 10.09.2019	**बड़ी रूपाहेली**	भीलवाड़ा से अजमेर रोड़ पर बड़ी रूपाहेली चौराहे पर उतरें।
11	चार दिवसीय	07.09.2019 से 10.09.2019	**विजयपुर** (चित्तौड़गढ़)	मोडिया महादेव। सम्पर्क : श्री दिग्विजसिंहजी, विजयपुर-9460225445 श्री शैतानसिंह, अचलपुरा-9413868027
12	चार दिवसीय (बालिका)	07.09.2019 से 10.09.2019	**डूंगरपुर**	नवलखा फार्म हाउस। रायसिंह डूंगरपुर-9928302842
13	तीन दिवसीय	14.09.2019 से 16.09.2019	**डाभला** (बसई)	एस.बी. हाई स्कूल, तह. विजापुर, जिला-मेहसाणा।
14	चार दिवसीय	19.09.2019 से 22.09.2019	**टेपू**	फलोदी-बारू मार्ग पर। सुबह, दिन में व शाम को बसें।
15	चार दिवसीय	19.09.2019 से 22.09.2019	**राजगढ़**	पोकरण से राजगढ़ के लिये सुबह, दिन में व शाम को बस उपलब्ध।

16	चार दिवसीय	19.09.2019 से 22.09.2019	**केतुकलां**	जोधपुर-जैसलमेर रोड़ पर 34 मील उतरें। सम्पर्क : नाथूसिंह-9950473366
17	चार दिवसीय	19.09.2019 से 22.09.2019	**गिड़ा** (बायतु)	बालोतरा, बायतु, पाटोदी से बस।
18	चार दिवसीय	20.09.2019 23.09.2019	**बिशनगढ़** (जालोर)	मुडेश्वर महादेव मंदिर, बिशनगढ़- कैलाश ग्राम से 3 कि.मी. दूर।
19	चार दिवसीय	20.09.2019 से 23.09.2019	**बिरोलिया** (पाली)	बिरलेश्वर महादेव मंदिर (पाली) बिरोलिया-कोलीवाड़ा मार्ग पर, सुमेरपुर से बस व टैक्सी।
20	चार दिवसीय	05.10.2019 से 08.10.2019	**ढेलाणा** (ग्राम-तालिया)	लोहावट से 5 कि.मी. दूर। सम्पर्क : हरिसिंह ढेलाणा-9783622100
21	चार दिवसीय	05.10.2019 से 08.10.2019	**डोरडा** (जालोर)	भीनमाल, जसवंतपुरा, रामसीन से बस।
22	चार दिवसीय	05.10.2019 से 08.10.2019	**बामणू**	जोधपुर-पोकरण मार्ग पर मंडला उतरें, वहाँ से साधन उपलब्ध।
23	चार दिवसीय	05.10.2019 से 08.10.2019	**दामोदरा** (जैसलमेर)	जैसलमेर से सम रूट पर।
24	चार दिवसीय (बालिका)	05.10.2019 से 08.10.2019	**पादरू** (बाड़मेर)	(जैतमाल छात्रावास) बालोतरा, सिवाना सिणधरी से बस।
25	चार दिवसीय (बालिका)	05.10.2019 से 08.10.2019	**जाखली** (नागौर)	
26	चार दिवसीय	19.10.2019 से 22.10.2019	**रोड़ा** (बीकानेर)	नोखा से 3 कि.मी. दूर शिविर स्थल,
27	सात दिवसीय	19.10.2019 से 25.10.2019	**राणीवाड़ा** (जालोर)	
28	सात दिवसीय	19.10.2019 से 25.10.2019	**शिव** (बाड़मेर)	राव चम्पाजी संस्थान, शिव। राजेन्द्रसिंह भिंयाड़ द्वितीय-9414655723
29	चार दिवसीय (बालिका)	20.10.2019 से 23.10.2019	**नाडोल** (पाली)	आशापुरा माताजी मंदिर, पाली, रानी, फालना से बस।
30	सात दिवसीय	20.10.2019 से 26.10.2019	**फलसूण्ड** (जैसलमेर)	पोकरण से हर घण्टे बस, शेरगढ़, साकड़ा व बाड़मेर से भी बस।
31	सात दिवसीय	20.10.2019 से 26.10.2019	**पीपलून** (सिवाना)	श्री गणपतसिंह का फार्म हाउस, सिवाना से साधन।
32	चार दिवसीय (बालिका)	22.10.2019 से 25.10.2019	**चोहटन**	विरात्रा महाविद्यालय। सम्पर्क : मोहनसिंह देदूसर-9950116125

33	चार दिवसीय	22.10.2019 से 25.10.2019	**सेमारी** (उदयपुर)	सम्पर्क : डूंगरसिंह भीमपुर-9829738898 सम्पर्क : कर्नल केसरसिंह-8107806119
34	चार दिवसीय	22.10.2019 से 25.10.2019	**लकड़वास** (उदयपुर)	सम्पर्क : भगतसिंह बेमला-9772211113
35	चार दिवसीय (बालिका)	22.10.2019 से 25.10.209	**देवीकोट** (जैसलमेर)	मल्लीनाथ छात्रावास; जैसलमेर व फतहगढ़ से बस।
36	चार दिवसीय (बालिका)	22.10.2019 से 25.10.2019	**बीकानेर**	नारायण निकेतन, जयपुर रोड़ पर, सुभाष पेट्रोल पम्प के पीछे
37	चार दिवसीय	23.10.2019 से 26.10.2019	**बोबासर** (चूरू)	तह. सुजानगढ़।
38	चार दिवसीय	29.10.2019 से 01.11.2019	**हुडास**	लाडनू से नागौर वाया डेह मार्ग पर स्थित।
39	चार दिवसीय (बालिका)	30.10.2019 से 02.11.2019	**पनराजसर**	मंदिर परिसर। सम्पर्क : पदमसिंह रामगढ-9001071485
40	सात दिवसीय	30.10.2019 से 05.11.2019	**नारोली** (बनासकांठा)	उत्तर बुनियादी विद्यालय, धराद से 31 कि.मी. दूर सांचोर रोड़ पर, बस सुविधा। पिलुड़ा से बांई ओर मुड़ना होगा।
41	सात दिवसीय (बालिका)	30.10.2019 से 05.11.2019	**रमुण** (बनासकांठा)	रोयल शैक्षणिक संकुल, तह. धानेरा धानेरा से डीसा रोड़ पर।
42	चार दिवसीय	31.10.2019 से 03.11.2019	**पीठ** (डूंगरपुर)	कोमेन्द्रसिंह पीठ।
43	चार दिवसीय	31.10.2019 से 03.11.2019	**कोटड़ीकलां** (चित्तौड़गढ़)	निम्बाहेड़ा। सम्पर्क : लक्ष्मणसिंह बडोली-9610392246

शिविर में आनेवाले युवक काला नीकर, सफेद कमीज या टी-शर्ट, काली जूती या जूता व युवतियाँ केसरिया सलवार कमीज, कपड़े के काले जूते, मौसम के अनुसार बिस्तर (एक परिवार से दो जने हों तो अलग-अलग), पेन, डायरी, टॉर्च, रस्सी, चाकू, सूई-डोरा, कंघा, लोटा, थाली, कटोरी, चम्मच, गिलास साथ लेकर आवें। संघ साहित्य के अलावा कोई पत्र-पत्रिका, पुस्तकें एवं बहुमूल्य वस्तुएँ साथ ना लावें।

दीपसिंह बेण्यांकाबास
शिविर कार्यालय प्रमुख
श्री क्षत्रिय युवक संघ

अपने उत्तरदायित्व का ज्ञान बहुधा हमारे संकुचित विचारों का सुधारक होता है। जब हम राह भूल कर भटकने लगते हैं तब यही ज्ञान हमारा विश्वसनीय पथ-प्रदर्शक बन जाता है।

- मुंशी प्रेमचन्द

हम जन्माष्टमी मनाते हैं, भगवान कृष्ण की पूजा करते हैं,
तो उनके द्वारा मानवमात्र के लिए बताए मार्ग 'गीता'
के अनुसार अपना जीवन बनाना हमारा दायित्व है।

IAS / RAS

तैयारी करने का राजस्थान का सर्वश्रेष्ठ संस्थान

स्प्रिंग बोर्ड

Spring Board

Springboard Academy, Main Riddi Siddi Choraha,
Opposite Bank of Baroda, Gopalpura, Bypass Jaipur

Website : www.springboardindia.org

प्रेम पौशाक

समस्त राजपूती पौशाकों के होलसेल विक्रेता

भँवर सिंह पीपासर
9828130003

रिडमल सिंह महणसर
9829027627

शॉप नं. 93, जोधपुर स्वीट्स
के सामने, खातीपुरा रोड़,
झोटवाड़ा, जयपुर

दातारसिंह दुगोली
7339926252

गली नं. 16 कॉर्नर,
बी.जे.एस. कॉलोनी,
पावटा बी रोड़,
जोधपुर

सितम्बर, सन् 2019
वर्ष : 56, अंक : 09

समाचार पत्र पंजी.संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City /411/2017-19

संघशक्ति

ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353

E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org

श्रीमान्.....

.....

.....

स्वत्वाधिकारी श्री संघशक्ति प्रकाशन प्रन्यास के लिये, मुद्रक व प्रकाशक, लक्ष्मणसिंह द्वारा ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर से : गजेन्द्र प्रिन्टर्स, जैन मन्दिर सांगाकान, सांगों का रास्ता, किशनपोल बाजार, जयपुर फोन : 2313462 में मुद्रित। सम्पादक-लक्ष्मणसिंह